सत्यमेव जयते

भारत सरकार

भारत

का

विधि

आयोग

(भा. दं. सं.) के अपराधों का शमन

रिपोर्ट सं. 237

दिसम्बर, 2011

न्यायमूर्ति पी. वी. रेड्डी
(भूतपूर्व न्यायाधीश, भारत का उच्चतम न्यायालय)
अध्यक्ष,
भारत का विधि आयोग

नई दिल्ली-110001
दूरभाष- 2301 9465 (निवास)
2338 4475 (कार्या.)
फैक्स- 2379 2745 (नि.)

डी.ओ.सं. 6(3)/196/2010-एल सी(एल एस) दिसम्बर 30, 2011

प्रिय माननीय मंत्री सलमान खुर्शीद जी

मैं " (भा. दं. सं.) के अपराधों के शमन" पर भारत के विधि आयोग की रिपोर्ट अग्रेषित कर रहा हूं ।

जैसाकि रिपोर्ट के पृष्ठ 1 पर निर्दिष्ट दो विनिश्चयों में उच्चतम न्यायालय ने इस विषय पर सुझाव दिया है कि विधि आयोग को और शमनीय अपराधों की पहचान करने का कार्य करना चाहिए । विधि कार्य विभाग ने अपने शा. ज्ञा. फा. सं. ए-60011/63/2010-प्रशा. III (वि.का.) तारीख 2 दिसम्बर, 2010 में उच्चतम न्यायालय के आदेश को निर्दिष्ट किया और आयोग से आवश्यक कार्रवाई करने का अनुरोध किया । इसके अतिरिक्त, आयोग के सदस्य-सचिव को संबोधित गृह सचिव ने अपने अर्द्ध-शासकीय पत्र सं. 3/2/2006-न्या. सेल तारीख 1 सितम्बर, 2009 में विधि आयोग से भा. दं. सं. की धारा 498-क के दुरुपयोग के प्रश्न पर विचार करने और उपचारात्मक उपाय सुझाने का अनुरोध किया है ।

प्रीति गुप्ता बनाम झारखंड राज्य [(2010) 8 एस. सी.सी. पृष्ठ 131] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि विधान मंडल द्वारा (भा. दं. सं. की धारा 498-क) के पूरे उपबंध पर गंभीरता से पुनर्विचार करने की अपेक्षा है । उच्चतम न्यायालय ने कई

विवक्षाओं और अतिशयोक्तिपूर्ण बयानों की प्रवृत्ति की निन्दा की । न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि "यह उचित समय है कि विधान मंडल को व्यावहारिक वास्तविकता पर विचार करना चाहिए और विद्यमान विधियों में उपयुक्त परिवर्तन करना चाहिए ।" समाज के वृहत्तर हित में निर्णय की एक प्रति भारत के विधि आयोग और केन्द्रीय विधि सचिव को भेजने का निदेश दिया गया । इस निर्णय के प्राप्त होने पर विधि कार्य विभाग ने अपनी संसूचना तारीख 2 दिसम्बर, 2010 द्वारा भारत के विधि आयोग से उक्त निर्णय की मताभिव्यक्तियों को ध्यान में रखते हुए आगे आवश्यक कार्रवाई करने का अनुरोध किया ।

तदनुसार, आयोग ने गहन अध्ययन किया और ऐसे कतिपय अपराधों की पहचान की जिन्हें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 के अधीन शमनीय अपराधों की सूची में जोड़ा जा सके । विशेषकर आयोग ने यह सुझाव दिया है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 498-क (पति या उसके नातेदार द्वारा स्त्री के साथ क्रूरता किया जाना) और भारतीय दंड संहिता की धारा 324 खतरनाक हथियार या साधनों द्वारा क्षति कारित करना) को न्यायालय की अनुज्ञा से शमनीय बनाया जाना चाहिए । राम गोपाल वाले मामले में (रिपोर्ट के पृष्ठ 1 द्वारा) पारित संक्षिप्त आदेश में उच्चतम न्यायालय के विचार के होते हुए भी आयोग ने यह मत व्यक्त किया कि भा. दं. सं. की धारा 326 को अशमनीय ही बना रहने दिया जाना चाहिए । अपराधों के शमन से सापेक्ष अपनाए जाने वाले दृष्टिकोण पर चर्चा की गई । सिफारिशों का संक्षिप्तांश अंतिम दो पृष्ठों पर है।

यह उल्लेखनीय है कि आयोग ने धारा 498-क पर एक परामर्श पत्र-सह-प्रश्नावली प्रकाशित की थी । कई अभ्यावेदन प्राप्त हुए जिनका

विश्लेषण उपाबंध 1-क में किया गया है । न्यायिक अधिकारियों और अधिवक्ताओं के सम्मेलनों में भी इस विषय पर चर्चा हुई । गहन-विचार विमर्श के पश्चात् पक्ष-विपक्ष पर विचार किया गया और यह निष्कर्ष निकाला गया कि धारा 498-क को उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए सुझाव के अनुसार न्यायालय की अनुज्ञा से शमनीय बनाया जाना चाहिए । इस आशंका को, कि पत्नी को समझौता करने के लिए उत्पीड़ित किया जाएगा, दूर करने के लिए कतिपय सुरक्षोपाय सुझाए गए हैं ।

धारा 498-क से संबंधित दूसरा पहलू कि क्या इसे जमानतीय बनाया जाना चाहिए और अभिकथित दुरुपयोग को कम करने और पुनर्मिलन सुकर बनाने के लिए क्या उपाय किया जाए, पृथक् रिपोर्ट की विषय-वस्तु है जिसे तैयार किया जा रहा है, ।

सादर और साभार,

ह.

(पी. वी. रेड्डी)

श्री सलमान खुर्शीद जी,
माननीय केन्द्रीय विधि और न्याय मंत्री,
शास्त्री भवन,
नई दिल्ली-110001.

(भा. दं. सं.) अपराधों का शमन

विषय सूची

		पृष्ठ संख्या
1.	प्रस्तावना	6
2.	दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के अधीन अपराधों के शमन की स्कीम और लक्षण	10
3.	विधि आयोग की संबंधित रिपोर्ट और किए गए विधायी परिवर्तन	15
4.	कतिपय मामलों में उच्चतम न्यायालय का दृष्टिकोण	21
5.	कतिपय अपराधों की शमनीयता	25
6.	सिफारिशें	52

उपाबंध 1-क प्रश्नावली के उत्तरों का विश्लेषण

उपाबंध 1-ख उत्तर देने वालों की सूची

उपाबंध 2 भारतीय दंड संहिता की धारा 498-क से संबंधित परामर्श पत्र-सह-प्रश्नावली

1. प्रस्तावना

1.1 राम गोपाल बनाम म. प्र. राज्य[1] वाले मामले में भारत के उच्चतम न्यायालय ने संक्षेप में इस प्रकार मत व्यक्त किया :

> "भारतीय दंड संहिता के अधीन ऐसे कई अपराध हैं जो इस समय अशमनीय हैं । इसमें भा. दं. सं. की धारा 498-क, धारा 326 आदि के अधीन दंडनीय अपराध सम्मिलित हैं । ऐसे कुछ अपराधों को कानून में उपयुक्त संशोधन कर शमनीय बनाया जा सकता है । हमारी यह राय है कि भारत का विधि आयोग यह परीक्षा करे कि क्या केन्द्रीय सरकार को इस बाबत उपयुक्त प्रस्ताव भेजा जा सकता है । ऐसे किसी उपाय से न केवल न्यायालयों को ऐसे मामलों जिनमें कथित पक्षकारों ने स्वयं समझौता कर लिया है, का विनिश्चय करने से मुक्ति मिलेगी बल्कि उनके बीच पुनर्मिलन की प्रक्रिया को भी बढ़ावा मिलेगा । तदनुसार, हम विधि आयोग और भारत सरकार से अनुरोध करते हैं कि ऐसे सभी पहलुओं की परीक्षा करे और ऐसे उपाय करे जो संभव हों ।"

पुनः उन्हीं विद्वान न्यायाधीशों ने 2004 की दांडिक अपील सं. 433 (दिवाकर सिंह बनाम बिहार राज्य) में बाद में पारित आदेश[2] में इसी प्रकार का मत व्यत किया जिसे नीचे उद्धृत किया गया है :–

> " इसके अतिरिक्त, हमारी यह राय है कि भा. द. सं. की धारा

---

[1] 2010 (7) स्केल 711.

[2] तारीख 18 अगस्त, 2010

324 और कई अन्य अपराधों को शमनीय बनाया जाना चाहिए । हमने पहले ही भारत के विधि आयोग और केन्द्रीय विधि और न्याय मंत्रालय को अपना सुझाव दिया है कि ऐसे कई अपराधों को जो इस समय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 के अधीन अशमनीय हैं शमनीय बनाने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता में उपयुक्त संशोधन किए जाएं । यह न्यायालयों का भार काफी कम कर देगा ।

भारत का विधि आयोग और विधि और न्याय मंत्रालय, भारत सरकार इस सुझाव पर भी विचार करे । विधि आयोग यह सिफारिश करने के लिए भारतीय दंड संहिता और अन्य कानूनों के कई अन्य उपबंधों की भी परीक्षा करे कि उन्हें भी शमनीय बनाया जाए चाहे वे इसे समय अशमनीय हों ।"

उच्चतम न्यायालय की इन मताभिव्यक्तियों के अनुसरण में, भारत के विधि आयोग ने ऐसे समुचित अपराधों की पहचान करने का कार्य आरंभ किया जिन्हें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 के अधीन शमनीय अपराधों की सूची में जोड़ा जा सके । वर्तमान कार्य केवल भारतीय दंड संहिता के अधीन दंडनीय बनाए गए अपराधों तक ही सीमित है ।

1.2 आपराधिक विधि के संदर्भ में शमन का अर्थ पक्षकारों के बीच सौहार्दपूर्ण समझौते के परिणामस्वरूप अभियोजन से मुक्ति है । मुर्रे[3] के एक प्राचीन विनिश्चय में कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए मत के अनुसार किसी अपराध का शमन यह द्योतित करता है "कि ऐसा व्यक्ति

---

[3] (1994) 21 आई. एल. आर. 103 पृष्ठ 112.

जिसके विरुद्ध अपराध किया गया है,किसी अभियोजन से प्रविरत रहने की उसकी इच्छा के उत्प्रेरण के रूप में कार्य करने के लिए आवश्यक नहीं कि धनीय प्रकृति हो, कुछ पारितोषिक प्राप्त किया है ।" हो सकता है कि पीड़ित को अपराधी से प्रतिकर प्राप्त हुआ हो या एक दूसरे पक्षकार के प्रति बर्ताव सत्कार्य के लिए परिवर्तित हो गया हो । पीड़ित व्यक्ति ऐसे अभियुक्त के घृणित आचरण को माफ करने के लिए तैयार हो जाता है जो सुधर जाता है और पछतावा करता है । आपराधिक विधि को ऐसी स्थितियों पर ध्यान देने और कतिपय प्रकार के अपराधों की बाबत आपराधिक कार्यवाहियों को समाप्त करने के उपचार का उपबंध करने की आवश्यकता है । अपराधों के शमन के पीछे यही तर्क है । प्रसंगतः शमनीय स्कीम न्यायालयों को संचित मामलों के भार से मुक्त करती है । शमनीय अपराधों का सूचीकरण भारतीय दंड विधि के लिए कुछ अद्भुत है । राज्य का अभियोजक अभिकरण शमनीयता की प्रक्रिया में अंतर्ग्रस्त नहीं है ।

1.3 किन अपराधों को शमनीय बनाया जाए या न बनाया जाए, विधि निर्माताओं के लिए हमेशा एक पहेली बना रहता है । विभिन्न परिप्रेक्ष्य से समस्या पर विचार करना चाहिए और पक्ष और विपक्ष को महत्व देना चाहिए तथा तार्किक विचार ग्रहण किया जाना चाहिए । मोटे तौर पर, ऐसे अपराध् जो राज्य की सुरक्षा को प्रभावित करते हैं या आम समाज पर गंभीर प्रभाव डालते हैं, के शमन किए जाने की अनुज्ञा नहीं दी जानी चाहिए । इसी प्रकार, गंभीर प्रकृति के अपराध शमनीयता के विषय-वस्तु नहीं होंगे । अपराधों की शमनीतया पर विधि की नीति जटिल है और विनिश्चय पर पहुंचने के लिए कोई नियमनिष्ठ फार्मूला उपलब्ध नहीं है । शमनीय और अशमनीय अपराधों की पहचान करने के लिए एक समग्र समेकित सोच की

आवश्यकता है । अपराधों के शिकार व्यतियों के हित और अपराधी की दोषसिद्धि के सामाजिक हित में प्रायः टक्कर होती है और यह विधि निर्माताओं के कार्य को अधिक जटिल बनाता है । यह कि न्यायालयों में मामलों की बाढ़ आयी है अतः, अधिक से अधिक अपराधों की पहचान शमनीयता के लिए की जाए, केवल गौण विचार है । प्राथमिकतः, अपराध की प्रकृति, महत्ता और परिणाम पर विचार करने की आवश्यकता है ।

.....

2. दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के अधीन अपराधों की शमनीयता की स्कीम और लक्षण

2.1 इस समय, 56 अपराध शमनीय है : धारा 320 की उपधारा (1) के अधीन सारणी में 43 और उपधरा (2) के अधीन सारणी में 13 । दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन वर्जित शमनीय अपराध भारतीय दंड संहिता के अधीन दंडनीय अपराध तक सीमित हैं । अन्य विधियों कि अधीन अपराधों को दंड प्रक्रिया संहिता में उल्लेख नहीं किया गया है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 के उपबंधों को तत्काल निदेश के लिए नीचे उद्धृत किया जा रहा है :

धारा 320 : अपराधों का शमन –

(1) नीचे सारणी के प्रथम दो स्तंभों में विनिर्दिष्ट भारतीय दंड संहिता की धाराओं के अधीन दंडनीय अपराधों का शमन उसी सारणी के तीसरे स्तंभ में वर्जित व्यक्तियों द्वारा किया जा सकेगा :–

अपराध	लागू भारतीय दंड संहिता की धारा	ऐसा व्यक्ति जिसके द्वारा अपराध का शमन किया जा सकेगा

(2) नीचे सारणी के प्रथम दो स्तंभों में विनिर्दिष्ट भारतीय दंड संहिता की धाराओं के अधीन दंडनीय अपराधों का शमन उस न्यायालय की अनुज्ञा से जिसके समक्ष ऐसे अपराध का कोई अभियोजन लंबित है, उस सारणी के

तीसरे स्तंभ में वर्णित व्यक्तियों द्वारा किया जा सकेगा :–

अपराध	लागू भारतीय दंड संहिता की धारा	ऐसा व्यक्ति जिसके द्वारा अपराध का शमन किया जा सकेगा

(3) जब कोई अपराध इस धारा के अधीन शमनीय है तब ऐसे अपराध के दुष्प्रेरण का, अथवा ऐसे अपराध को करने के प्रयत्न का जब ऐसा प्रयत्न स्वयं अपराध हो या जहां अभियुक्त भारतीय दंड संहिता की धारा 34 या 149 के अधीन दायी है, शमन उसी प्रकार से किया जा सकता है ।

(4)(क) जब वह व्यक्ति,जो इस धारा के अधीन अपराध का शमन करने के लिए अन्यथा सक्षम होता अठारह वर्ष से कम आयु का है या जड़ या पागल है तब कोई व्यक्ति जो उसकी ओर से संविदा करने के लिए सक्षम हो, न्यायालयों की अनुज्ञा से अपराध का शमन कर सकता है ।

(ख) जब वह व्यक्ति, जो इस धारा के अधीन अपराध का शमन करने के लिए अन्यथा सक्षम होता मर जाता है तब ऐसे व्यक्ति का, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 से यथापरिभाषित विधिक प्रतिनिधि न्यायालय की सहमति से ऐसे अपराध का शमन कर सकता है ।

(5 जब अभियुक्त विचारणर्थ सुपुर्द कर दिया जाता है या जब वह दोषसिद्ध कर दिया जाता है और अपील लंबित है, तब अपराध का शमन, यथास्थिति,उस न्यायालय की इजाजत के बिना अनुज्ञात किया जाएगा जिसे वह सुपुर्द किया गया है या जिसके समक्ष अपील सुनी जानी है ।

(6) धारा 401 के अधीन पुनरीक्षण की अपनी शक्तियों के प्रयोग में कार्य करते हुए उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय किसी व्यक्ति को किसी ऐसे अपराध का शमन करने की अनुज्ञा दे सकता है जिसका शमन करने के लिए वह व्यक्ति इस धारा के अधीन सक्षम है ।

(7) यदि अभियुक्त पूर्व दोषसिद्धि के कारण किसी अपराध के लिए या तो वर्धित दण्ड से या भिन्न किस्म के दण्ड से दण्डनीय है तो ऐसे अपराध का शमन न किया जाएगा ।

(8) अपराध के इस धारा के अधीन शमन का प्रभाव उस अभियुक्त की दोषमुक्ति होगी जिससे अपराध का शमन किया गया है ।

(9) अपराध का शमन इस धारा के उपबंधों के अनुसार ही किया जाएगा, अन्यथा नहीं ।

2.2 धारा 320 का विश्लेषण निम्नलिखित प्रमुख लक्षण प्रकट करता है :

" धारा में विनिर्दिष्ट अपराधों के सिवाय किसी अन्य अपराध का शमन नहीं किया जा सकता है । संबद्ध सारणी के स्तंभ 3 में विनिर्दिष्ट व्यक्तियों द्वारा ही अपराध का शमन किया जा सकता है और ऐसा व्यक्ति इस आशय से प्रत्यक्षतः व्यथित व्यक्ति है कि वह अपराध का शिकार व्यक्ति है। धारा 320 के अधीन अपराध की संरचना के परिणामस्वरूप अभियुक्त उस अपराध से दोषमुक्त हो जाएगा जिसके लिए उसे आरोपित किया गया है और न्यायालय मामले में आगे कार्यवाही करने की अपनी अधिकारिता खो देता है । विशेष विधियों के कुछ उपबंधों के असमान राज्य

की ओर से कोई अन्य व्यक्ति अपराधों के शमन के लिए सशक्त नहीं है । तथापि, लोक अभियोजक दंड प्रक्रिया संहिता की धरा 321 के उपबंध के अनुसार न्यायालय की सम्मति से अभियोजन वापस ले सकता है ।

2.3. धारा 320 की उपधारा (3) यह नियम अधिकथित करती है कि धारा में विनिर्दिष्ट शमनीय अपराधों की बाबत अपराध करने का दुष्प्रेरण या प्रयास भी शमनीय है । इसी प्रकार, संयोजन भी ऐसे अभियुक्त को लागू हो सकता है जो भारतीय दंड संहिता की धारा 34 या धारा 149 के आधार पर आन्वयिक रूप से अपराध के लिए दायी है । तब उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण शक्तियों का प्रयोग करते हुए अपराध के संयोजन की अनुज्ञा दी जा सकती है । उपधारा (5) यह उपबंध करती है कि संयोजन की अनुज्ञा सुपुर्दगी या अपीली कार्यवाहियों के लंबित रहने के दौरान सुपुर्दगी न्यायालय या अपीली न्यायालय की इजाजत से ही की जा सकती है ।

2.4 उच्चतम न्यायालय ने सुरेन्द्र नाथ मोहन्ती बनाम उड़ीसा राज्य[4] (तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ) वाले मामले में यह स्पष्ट किया है कि भारतीय दंड संहिता के अधीन दंडनीय अपराधों के शमन के लिए दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 320 के अधीन पूरी स्कीम का उपबंध किया गया है । धारा 320 की उपधारा (1) यह उपबंध करती है कि इसके अधीन उपबंधित सारणी में वर्णित अपराधों का शमन उक्त सारणी के स्तंभ 3 में वर्णित व्यक्तियों द्वारा किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त उपधारा (2) यह उपबंध करती है कि सारणी में वर्णित अपराधों का शमन

---

[4] ए. आई. आर. 1999 एस. सी. 2181.

न्यायालय की अनुज्ञा से पीड़ित द्वारा किया जा सकता है । इसके विपरीत, उपधारा (9) विनिर्दिष्टतः यह उपबंध करती है कि "इस धारा के उपबंध के सिवाय किसी अपराध का शमन नहीं किया जा सकेगा।" पूर्वोक्त विधायी आदेश को ध्यान में रखते हुए उपरोक्त सारणी 1 या 2 के अधीन आने वाले अपराधों का ही शमन किया जा सकता है और भारतीय दंड संहिता के अधीन दंडनीय शेष अपराधों का शमन नहीं किया जा सकता ।

.....

3. विधि आयोग की संबंधित रिपोर्टें और किए गए विधायी परिवर्तन

3.1 1898 की पुरानी दंड प्रक्रिया संहिता में धारा 345 में अपराधों के शमन का उपबंध था । इसकी उपधारा (1) में भारतीय दंड संहिता के अधीन 22 अपराधों की सूची थी जिनका शमन न्यायालय की अनुज्ञा के बिना व्यथित पक्षकार द्वारा किया जा सकता था और उपधारा (2) में 32 अन्य अपराधों का उल्लेख था जिनका भी शमन किया जा सकता था किन्तु न्यायालय की अनुज्ञा से । विधि आयोग ने अपनी 41वीं रिपोर्ट के अध्याय 24 में अपराधों के शमन के विषय पर विचार किया था । आयोग के अनुसार, " ..... ऐसा व्यापक सिद्धांत जो वर्तमान स्कीम का आधार गठित करता है, यह है कि जहां अपराध आवश्यकतः प्राइवेट प्रकृति का है और अपेक्षाकृत गंभीर नहीं है, वह शमनीय है ।" आयोग इस सामान्य नियम की विरचना के विरुद्ध था कि ऐसे सभी अपराध जो तीन वर्ष या इसी प्रकार के अधिकतम कारावास से दंडनीय हैं, दंडनीय होंगे । यह इंगित किया गया था कि यद्यपि इसमें निश्चितता का गुण है जो 'उपयुक्त' नहीं होगा । आयोग ने उचित ही यह मत व्यक्त किया : "हमारी राय में इस सामान्य नियम जिससे भिन्न्-भिन्न निर्वचन होने की संभावना है, के बजाय धारा 345 के उपबंध की तरह स्पष्ट और विनिर्दिष्ट उपबंध करना बेहतर है । आगे आयोग ने इस सुझाव को अस्वीकार कर दिया कि दो वर्गीकरण बनाए रखने के बजाय प्रत्येक मामले में न्यायालय की अनुज्ञा की अपेक्षा करते हुए विधि को सरल बनाया जाना चाहिए । आयोग शमनीय अपराधों की सूची को उदारतापूर्वक बढ़ाने के पक्ष में नहीं था । आयोग ने यह मत

व्यक्त करते हुए धारा 143, 147, 209, 210, 279, 304क, 326, 347, 380, 456, 457 और 495 के अधीन अपराधों को सम्मिलित करने के सुझाव को नामंजूर कर दिया कि "लोक शांति, व्यवस्था और सुरक्षा ऐसे विषय हैं जिससे समाज का व्यापक हित है और ऐसे अपराध जो उन्हें जोखिम में डालता है, को न्यायालयों द्वारा युक्तिसंगत रूप से दंडित किया जाना चाहिए ।" यह संदेहपूर्ण है कि क्या आयोग द्वारा निर्दिष्ट ये सभी अपराध (पैराग्राफ 24.69 द्वारा) सारतः लोक शांति और सुरक्षा को प्रभावित करते हैं। तब आयोग ने सिफारिश की कि भारतीय दंड संहिता की धारा 354 (महिला का लज्जा भंग करने के आशय से उस पर हमला), धारा 411 (बेईमानी से चुराई गई संपत्ति प्राप्त करना), और धारा 414 (चुराई गई संपत्ति को छिपाने या निपटाने में सहायता करना) को शमनीय बनाया जाए परंतु धारा 411 और 414 के संबंध में संपत्ति का मूल्य 250/- रुपए से अधिक न हो । तथापि, आयोग ने यह मत व्यक्त किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 374 के अधीन दंडनीय विधिविरुद्ध अनिवार्य श्रम के अपराध को शमनीय न बनाया जाए । विधि आयोग की उपरोक्त सिफारिशें अर्थात् शमनीय अपराधों की सूची में तीन अपराधों के जोड़े जाने और भारतीय दंड संहिता की धारा 374 का लोप किए जाने की बात दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में प्रतिबिम्बित हुई ।

3.2 1973 की नई संहिता में, प्रथम सारणी में 21 अपराध थे और द्वितीय सारणी में 36 अपराध थे जो पुरानी संहिता में 54 अपराध की तुलना में शमनीय अपराधों की कुल संख्या 57 थी । विधि आयोग की (41वीं रिपोर्ट) को सुझाव के आधार पर एक अपराध का लोप किया गया और धारा 354, 411 और 414 में विनिर्दिष्ट तीनों अपराधों को 1973 की

संहिता में शमनीय अपराधों की सूची में जोड़ा गया । इसके अतिरिक्त, नई दंड प्रक्रिया संहिता में, भा. दं. सं. की धारा 500 को धारा 320 की उपधारा/सारणी दोनों में स्थान मिला । लोक कर्तव्य के निवर्हन में उसके आचरण की बाबत राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, राज्यपाल या मंत्री के विरुद्ध मानहानि, यदि लोक अभियोजक द्वारा किए गए परिवाद पर संस्थित की जाती है तो न्यायालय की अनुज्ञा से ही शमनीय है । अन्य मानहानि सारणी-1 में यथावत् है ।

3.3 2005 के दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम (23.06.2006 से प्रभावी 2005 का अधिनियम सं. 25) में, भा. दं. सं. की धारा 324 (घातक हथियार या साधनों द्वारा क्षति कारित करना), जो सभी सुसंगत मानकों द्वारा शमनीय अपराध बनता है, का लोप किया गया । विधि आयोग ने अपनी 154वीं रिपोर्ट (1996) में यह सिफारिश की थी कि उक्त अपराध (अन्य अपराधों के साथ-साथ)को उपधारा (1) के अधीन सारणी में परिवर्तित किया जा सकता है जिससे न्यायालय की अनुज्ञा के बिना इसका शमन किया जा सके । तथापि, विधि आयोग ने अपनी 177वीं रिपोर्ट में उपधारा (2) के अधीन सारणी में इसे बने रखने की सिफारिश की थी । किन्तु, किसी ठीक कारण के बिना, उक्त अपराध का शमनीय अपराधों की सूची से लोप कर दिया गया । 2005 के संशोधन अधिनियम द्वारा भा. दं. सं. की धारा 324 के हटाए जाने से, शमनीय अपराधों की संख्या 56 हो गई है अर्थात् पूर्व 57 (21-136) की तुलना में प्रथम सारणी में 21 और द्वितीय सारणी में 35 है ।

3.4 दंड प्रक्रिया संहिता से संबंधित अगला संशोधन 2009 (2009 का

अधिनियम 5) का था । धारा 320(1) और (2) का भाग गठित करने वाली सारणी में कतिपय परिवर्तन किए गए । विधि आयोग की 154वीं रिपोर्ट और 177वीं रिपोर्ट की सिफारिशों को प्रभावी बनाने के लिए एक दूसरी सारणी के कई अपराधों को (धारा 320 की उपधारा (2) के अधीन) पहली सारणी में अंतरित किया गया । इसके अतिरिक्त, धारा 379, 381, 406, 407,411 के संबंध मे यथाविहित चुराई गई संपत्ति, आदि के मूल्य का लोप किया गया । किया गया दूसरा महत्वपूर्ण परिवर्तन शमनीय अपराधों की सूची से भा. दं. सं. की धारा 354 का हटाया जाना था । धारा 354 (लज्जा भंग करने के आशय से महिला पर हमला) जो विधि आयोग की 41वीं रिपोर्ट की सिफारिश के अनुसरण में नई संहिता की धारा 320(2) के अधीन सारणी में सम्मिलित की गई थी, 2009 के अधिनियम 5 द्वारा हटा दी गई । इस समय, अब यह शमनीय अपराध नहीं है । 154वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश के अनुसार भा. दं. सं. की धारा 312 (गर्भपात कारित करना) को धारा 320(2) के अधीन सारणी में सम्मिलित किया गया । इस प्रकार, दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 (2009 का अधिनियम 5) जो 31 दिसम्बर, 2009 को प्रभावी हुआ, के पश्चात् दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में शमनीय अपराधों की संख्या 56 हो गई अर्थात् धारा 320(1) के अधीन सारणी में 43 और धारा 320(2) के अधीन सारणी में 13 ।

3.5 154वीं रिपोर्ट में, विधि आयोग ने यह सिफारिश की थी कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 की उपधारा (3) की व्याप्ति को बढ़ाया जाए जिससे ऐसे अभियुक्तों के मामलों को सम्मिलित किया जा सके जो भा. दं. सं. की धारा 34 या धारा 149 के अधीन आन्वयिकतः दायी हैं । यह

विधानमंडल द्वारा स्वीकार किया गया और उपधारा (3) को संशोधित किया गया । इस संदर्भ में, हम भा. दं. सं. की धारा 120ख के अधीन आपराधिक षडयंत्र के अपराध को शमनीय बनाने और तदनुसार धारा 320 की उपधारा (3) को संशोधित करने की सिफारिश कर रहे हैं बशर्ते यह अन्य शमनीय अपराधों से संबंधित हो ।

3.6 विधि आयोग की 154वीं रिपोर्ट में एक और महत्वपूर्ण सिफारिश है जिसका हम उल्लेख करना चाहते हैं । आयोग ने अध्याय 12 के पैरा 11 में इस प्रकार मत व्यक्त किया :

> "वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों द्वारा विभिन्न कार्यशालाओं में यह भी सुझाव दिया गया कि दंड प्रक्रिया संहिता को अन्वेषक प्रक्रम पर अन्वेषक अधिकारी को ऐसे अपराधों का शमन करने के लिए सशक्त करना चाहिए जो शमनीय हैं और ऐसे मजिस्ट्रेट को रिपोर्ट करना चाहिए जो ऐसे अपराधों के संयोजन को प्रभावी बनाता हो । यह कदम स्वयं आरंभिक प्रक्रम पर विचारण कार्यवाहियों के कई मामलों को कम करेगा और काफी हद तक न्यायालयों की कार्य सूची को मुक्त करेगा । वस्तुतः, राष्ट्रीय पुलिस आयोग ने अपनी चौथी रिपोर्ट में यह सुझाव दिया था कि यह शमनीय प्रवर्ग के मामलों के शीघ्र निपटान में सहायक होगा यदि अन्वेषण के प्रक्रम से अपराधों के शमन के लिए पक्षकारों की इच्छा पर ध्यान देते हुए पुलिस अधिकारियों को सशक्त करने के लिए प्रक्रिया का संशोधन किया जाए और तदुपरि मामले बंद किए जाएं और मामले को ऐसे न्यायालय को रिपोर्ट किया जाए जिसे पुलिस रिपोर्ट से आरंभिक

आदेश पारित करने का प्राधिकार हो जैसा प्रत्येक अन्य मामले हैं जिसमें पुलिस अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करती है ।"

विधि आयोग ने महसूस किया कि ऐसे उपबंध का प्रभाव हितकर होगा और पुलिस द्वारा दुरुपयोग को रोकेगा ।

3.7 राष्ट्रीय पुलिस आयोग की सिफारिश को प्रभावी बनाने के लिए 1994 (दंड प्रक्रिया संहिता) संशोधन विधेयक ने निम्नलिखित शब्दों में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 में उपधारा (3क) जोड़ने का प्रस्ताव किया :

" तथापि, यदि धारा 320 की सारणी में वर्णित अपराधों की बाबत, अन्वेषण के अनुक्रम में, ऐसा व्यक्ति जिसके द्वारा उक्त धारा के अधीन अपराध का शमन किया जा सकता है, उक्त धारा में यथा-उपबंधित अपराध का शमन करने की अपनी इच्छा व्यक्त करते हुए पुलिस थाना भार-साधक अधिकारी को लिखित में रिपोर्ट करता है तो अधिकारी उपधारा 2(1) में विहित पुलिस रिपोर्ट में इस तथ्य का उल्लेख करेगा और संबद्ध व्यक्ति से शमनकारी रिपोर्ट ऐसे मजिस्ट्रेट को अग्रेषित करेगा जो तदुपरि धारा 320 के अधीन मामले पर विचार करेगा मानो संबद्ध अपराध का अभियोजन मजिस्ट्रेट के समक्ष आरंभ किया गया हो।"

तथापि, इस प्रस्तावित संशोधन ने निश्चित रूप ग्रहण नहीं किया, यद्यपि विधि आयोग ने अपनी 177वीं रिपोर्ट में इस बाबत 154वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश को दोहराया था ।

4. कतिपय मामलों में उच्चतम न्यायालय का दृष्टिकोण

4.1 यद्यपि भा. दं. सं. की धारा 326 के अधीन अपराध विधि में शमनीय नहीं था फिर भी उच्चतम न्यायालय ने अधिक समय लगने और पक्षकारों के बीच विवाद के समाधान को ध्यान मे रखते हुए पहले ही तीन मास के भुगते हुए कारावास के दंडादेश को कम किया[5] । अशमनीय अपराध की बाबत परिवादी और अभियुक्त के बीच हुए सौहार्दपूर्ण समझौते से उद्भूत स्थिति पर विचार करते हुए सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया दूसरा अन्य दृष्टिकोण मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए कार्यवाहयों को अभिखंडित करना था । बी. एस. जोशी बनाम हरियाणा राज्य[6], निखिल मर्चेंट बनाम सी. बी. आई[7] और मनोज शर्मा बनाम राज्य[8] वाले मामले इस दृष्टिकोण के नजीर हैं ।

4.2 बी. एस. जोशी वाले पहले मामले में, अभियुक्त भा. दं. सं. की धारा 498-क और 406 के अधीन अपराधों से आरोपित किए गए थे । परिवादी पत्नी द्वारा एक शपथपत्र फाइल किया गया कि विवाद को अंतिम रूप से सुलझा लिया गया है और अभियुक्त तथा पीड़ित ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को अभिखंडित करने का अनुरोध किया । उच्च न्यायालय ने इस आधार पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन अपनी अंतर्निहित शक्तियो का प्रयोग करने से इनकार किया कि उक्त धारा का प्रयोग अशमनीय अपराधों का अभियोजन अभिखंडित करने के लिए नहीं किया जा

---

[5] तदैव । गुलाब दास बनाम म. प्र. राज्य, 2011 (12) स्केल 625.

[6] (2003) 4 एस. सी. सी. 675..

[7] (2008) 9 एस. सी. सी. 677.

[8] 2008(14) स्केल 44.

सकता है चाहे पक्षकारों ने विवाद को सुलझा लिया हो । अपील में, उच्चतम न्यायालय ने उच्च न्यायालय के आदेश को उलट दिया और अभिनिर्धारित किया कि ऐसे मामलों में उच्च न्यायालय धारा 482 के अधीन अपनी अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए आपराधिक कार्यवाही/प्रथम इत्तिला रिपोर्ट/परिवाद अभिखंडित कर सकता है । उच्चतम न्यायालय ने विषय पर निर्णयज विधि की चर्चा करने के पश्चात् यह अधिकथित किया : "अतः, हमारा यह मत है कि न्याय के उद्देश्यों की प्राप्ति के प्रयोजन के लिए यदि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को अभिखंडित करना आवश्यक हो तो धारा 320 अभिखंडित करने की शक्ति का प्रयोग करने की वर्जना नहीं होगी ।" तथापि, न्यायालय ने सावधान किया कि तथापि, प्रत्येक मामले के तथ्यों ओर परिस्थितियों के आधार पर ऐसी शक्ति का प्रयोग किया जाए या नहीं, यह भिन्न विषय है ।" बी. एस. जोशी वाले मामले में, उच्चतम न्यायालय ने मामले के विशेष तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए न्याय के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अशमनीय अपराधों की कार्यवाहियों को भी अभिखंडित करने की धारा 482 के अधीन शक्ति के प्रयोग को न्यायोचित ठहराया ।

4.3 बी. एस. जोशी वाले मामले में अधिकथित सिद्धांत को निखिल मर्चेंट बनाम सी. बी. आई (पूर्वोक्त) वाले मामले में अनुमोदन के साथ उद्धृत किया । यह ऐसा मामला था जिसमें भा. दं. सं. की धारा 120ख के साथ पठित धारा 420, 467, 468 और 471 के अधीन अभियुक्त के विरुद्ध आरोप पत्र फाइल किया गया था । जबकि धारा 420 के अधीन अपराध शमनीय था, कूटरचना का अपराध शमनीय नहीं था । केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा आरोप पत्र फाइल किए जाने के पूर्व अपचारी कंपनी

और बैंक के बीच एक वाद दायर किया गया था जिसमें समझौता हो गया था । उस समझौते के अनुसरण में, अपीलार्थी-अभियुक्त जो कंपनी का एक निदेशक था, ने आपराधिक मामले से उन्मोचन के लिए आवेदन फाइल किया । उच्च न्यायालय ने उस आवेदन को खारिज कर दिया । उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया: इसमें इसके पूर्व उपदर्शित तथ्यों को समग्र रूप से देखते हुए और बी. एस. जोशी वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय और कंपनी और बैंक के बीच हुए समझौते तथा बैंक द्वारा फाइल वाद में फाइल सहमति निबंधनों के खण्ड 11 को भी ध्यान में रखते हुए हमारा यह समाधान हो गया है कि यह एक उचित मामला है जहां आपराधिक कार्यवाहियों को अभिखंडित करने के मार्ग में तकनीकीपन को नहीं आने दिया जाना चाहिए । चूंकि हमारे मतानुसार, पक्षकारों के बीच हुए समझौते के पश्चात् इसका बना रहना निरर्थक प्रयास होगा ।" इस प्रकार, उच्चतम न्यायालय ने बी. एस. जोशी वाले मामले के विनिश्चय के तर्काधार का अवलंब लेते हुए कार्यवाहयों को अभिखंडित कर दिया । निम्नलिखित प्रासंगिक मताभिव्यक्तियां पैराग्राफ 29 में की गई थीं : "भा.दं.सं. की धारा 420 के अधीन दंडनीय छल के अपराध के लक्षण और तथ्यात्मक अंतर्वस्तु के बावजूद इसे न्यायालय की इजाजत से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 की उपधरा (2) के अधीन शमनीय बनाया गया है । वस्तुतः कूटरचना को एक शमनीय अपराध के रूप में सम्मिलित किया गया है किन्तु यह ऐसा मामला है जिसमें बी. एस. जोशी वाले मामले में उपदर्शित सिद्धांत सुसंगत हो जाता है ।"

ऐसा ही अनुक्रम मनोज शर्मा[9] वाले मामले में अपनाया गया । अभी हाल ही में, उच्चतम न्यायालय ने शिजी उर्फ पप्पू बनाम राधिका[10] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया कि मात्र इस कारण कि अपराध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 के अधीन शमनीय नहीं है, स्वयमेव उच्च न्यायालय के लिए धारा 482 के अधीन अभियोजन को अभिखंडित करने के लिए अपनी शक्ति का प्रयोग करने से इनकार करने का कोई कारण नहीं है ।

.....

[9] तदैव ।
[10] 2010 (12) स्केल 588.

5. कतिपय अपराधों की शमनीयता

5.1 अब, हम कतिपय विनिर्दिष्ट अपराधों की शमनीयता के प्रश्न पर विचार करेंगे ।

भा. दं. सं. की धारा 498-क

5.2 क्या धारा 498क में विनिर्दिष्ट अपराध को शमनीय बनाया जाए, यदि हां, तो क्या यह न्यायालय की अनुज्ञा से या उसके बिना शमनीय हो, यह दोहरा प्रश्न है?

5.3 धारा 498क महिला के साथ क्रूरता करने के लिए पति या पति के नातेदारों को दंडित करता है । धारा में दी गई क्रूरता की परिभाषा दो भागों में है: 1) ऐसी प्रकृति का जानबूझ कर किया गया आचरण जिससे महिला द्वारा आत्महत्या करने, गंभीर क्षतियां जीवन, अंग या स्वास्थ्य (मानसिक या शारीरिक) खतरा किए जाने की संभावना है, 2) उसे या उसके नातेदारों को प्रपीड़ित करने की दृष्टि से महिला को तंग करना जिससे किसी संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति की विधिविरुद्ध मांग पूरी हो सके । इस प्रकार, दहेज संबंधी तंग किया जाना और क्षति या उसके जीवन, अंग या स्वास्थ्य को खतरा कारित कर पति या उसके नातेदारों की ओर से उग्र आचरण को धारा 498क की व्याप्ति के भीतर माना जाता है । प्रायः, भा. दं. सं. की धारा 498क के अधीन अभियोजन दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3 और 4 के अधीन अभियोजन से भी युक्त होता है।

5.4 प्रसामान्यतः, यदि पत्नी बर्ताव में परिवर्तन या पति की ओर से

पश्चाताप या उसे पहुंची क्षति की भरपाई के कारण उसके साथ हुए दुर्बर्ताव या तंग किए जाने को माफ करने के लिए तैयार है तो आपराधिक कार्यवाहियों को समाप्त करने के मार्ग में विधि को आड़े नहीं आने दिया जाना चाहिए । तथापि, शमनीयता के विरुद्ध दिया गया मुख्य तर्क यह है कि दहेज एक सामाजिक बुराई है और ऐसे लोगों जो दहेज की मांग के लिए पत्नियों को तंग करते हैं, को दंडित करने के लिए विधि को प्राइवेट समझौते पर अनुमोदन की अपनी मुहर लगाने के बजाय अपना पूर्ण अनुक्रम अपनाने की अनुज्ञा दी जानी चाहिए । यह तर्क किया गया कि सामाजिक चेतना और सामजिक हित की यह मांग है कि ऐसे अपराधों को न्यायालय बाह्य समझौते के क्षेत्र से बाहर रखा जाए । इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि इस पहलू पर विचार करते समय, समाज पर अपराध के प्रभाव और हो सकने वाले समाजिक अपहानि की मात्रा पर सम्यक् रूप से विचार किया जाना चाहिए । वहीं, ऐसे अवांछनीय परिणाम जो शमन की अनुज्ञा न दिए जाने से हो सकते हैं, को भी ध्यान में रखना चाहिए क्योंकि सामाजिक अपहानि या सामाजिक हित पर निर्वात में विचार नहीं किया जा सकता । एक समग्र और तार्किक निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए । जब सामाजिक बुराई को रोकने के लिए अधिनियमित विधि के प्रभावी कार्यान्वयन के विरुन्द्ध कोई अवरोध नहीं डाला जाएगा, वहीं यह नहीं भूलना चाहिए कि समाज वैवाहिक सौहार्द और व्यथित महिलाओं के कल्याण के संवर्धन में समानतः हितबद्ध है । इस कारण तार्किक और संतुलित सोच की सर्वाधिक आवश्यकता है कि आपराधिक कार्यवाहियों को समाप्त करने के लिए संतुष्ट जोड़ों के लिए अन्य मार्ग खुले हों । ऐसा ही एक अनुक्रम उच्च न्यायालय में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के

अधीन अभिखंडन याचिका फाइल करना है । एक प्रासंगिक प्रश्न यह है कि क्या उन्हें समय लगने वाली और खर्चीली प्रक्रिया से गुजरने के लिए भेजना आवश्यक है । यदि ऐसी पत्नी जिसने पति के हाथों से यातना भोगी है, पिछली बातों को भूलने और पति के साथ सौहार्द रूप से जीवन यापन करने या विद्वेष या प्रतिशोध के बिना सम्मानपूर्वक अलग होने के लिए तैयार है तो समाज को ऐसे प्रयास की निंदा नहीं करनी चाहिए न ही यह कहा जा सकता है कि ऐसे मामलों में सौहार्दपूर्ण समाधान की विधिक मान्यता निषिद्ध बुराई अर्थात् दहेज को प्रोत्साहित करेगा । धारा 498क को प्रतिकारी होने की अनुज्ञा नहीं दी जानी चाहिए । पारिवारिक जीवन और वैवाहिक संबंध से संबंधित मामलों में, समझौते या सुलह को प्रभावी बनाने के विधिक कार्यवाहियों की समाप्ति की अनुज्ञा देने से होने वाला फायदा या लाभ उस सामाजिक अपहानि की मात्रा से अधिक महत्वपूर्ण होगा जो गैर-अभियोजन से कारित होता । यदि दोनों पक्षों द्वारा हुए समझौते के बावजूद कार्यवाहियों को चलते रहने की अनुज्ञा दी जाती है तो या तो दोषसिद्धि की थोड़ी गुंजाइश होगी या पीड़ित व्यक्ति का जीवन और अधिक दयनीय हो जाएगा । किस तरह से सामाजिक सद्भाव का लक्ष्य प्राप्त किया जाए? हम दोहराते हैं कि इस मुद्दे पर विचार करते समय सैद्धांतिक और एकल दृष्टिकोण नहीं अपनाया जा सकता । पारिवारिक विवाद की संवेदनशीलता और व्यक्तिगत तथ्यों और परिस्थितियों की उपेक्षा नहीं की जा सकती । अतः आयोग इस मत का समर्थन नहीं करना चाहता है कि दहेज एक सामाजिक बुराई होने के कारण, किसी भी परिस्थिति में शमन की अनुज्ञा नहीं दी जानी चाहिए । प्रासंगिकतः यह उल्लेखनीय है कि कई अपराधों की न केवल व्यक्तिगत अपहानि बल्कि सामाजिक अपहानि की

संभाव्यता होने के कारण शमनीय अपराधों के रूप में वर्गीकृत किया गया है । इसके अतिरिक्त, धारा 498-क के अधीन आरोप की मुख्य बात दहेज से संबंधित तंग किया जाना होना आवश्यक नहीं है । यह केवल स्पष्टीकरण के खंड (क) के भीतर आने वाली 'क्रूरता' हो सकता है और दहेज की मांग उस खंड का अभिन्न भाग नहीं है ।

5.5 शमनीयता के विरुद्ध एक अन्य तर्क यह है कि शमन करने की अनुज्ञा महिलाओं के विरुद्ध हिंसा की विधिक मान्यता के समान होगी और पुनर्मिलन का तथ्य हिंसा को माफ करने का वैधतः न्याय्य आधार नहीं हो सकता है । ऐसे तर्क की स्वीकृति का यह आशय होगा कि विधि की पूर्विकता आपराधिक कार्यवाहियों को उनके तार्किक निष्कर्ष तक पहुंचाना चाहिए और मतभेदों को सुलझाने की पारस्परिक इच्छा के बावजूद पति को दंडित किया जाना चाहिए । इसका यह अभिप्राय है कि चाहे पुनर्मिलन हो या न हो पति को आसन्न अभियोजन और दंड यदि कोई है, से मुक्त नहीं किया जाना चाहिए; तो केवल धारा 498क ही अपना लक्ष्य प्राप्त करेगा । हम नहीं सोचते कि आपस में लड़ने वाले जोड़ों के बीच हुए पुनर्मेल को ध्यान दिए बिना अभियोजन को अपना अनुक्रम अपनाने की अनुज्ञा देकर धारा 498क के बेहतर लक्ष्य को प्राप्त किया जाएगा । जैसाकि पहले मत व्यक्त किया गया है, पारिवारिक और सामाजिक संबंधों को प्रभावित करने वाले संवेदनात्मक मुद्दे से निपटने के लिए एक संतुलित और समग्र दृष्टिकोण अपनाए जाने की आवश्यकता है । शमन के बिना पुनर्मिलन व्यवहार्यतः संभव नहीं होगा और विधि को पुनर्मिलन के महत्वपूर्ण घटना की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए । विधि के दंडात्मक पहलू पर ही बल नहीं दिया जाना चाहिए । इस तरह के मामलों में, विधि को पति और विमुख

पत्नी के बीच उचित पुनर्मिलन या सौहार्दपूर्ण संबंधों के पुनरुज्जीवन के मार्ग में नहीं आना चाहिए । सभी अभियोजनों और दंडों के पीछे समझदारी यह है कि स्वतंत्रता का निवारण, प्रवंचन और पछतावा और सुधार के संतुलित मिश्रण का कैसे पता लगाया जाए । जैसा कठोर और क्रूर दण्डात्मक सत्ता के कार्यकरण में पाया जाता है, केवल एक ही पहलू का कोई महत्व वर्गीकृत मोडल हो जाएगा ।

5.6 शमन करने के विरुद्ध प्रस्तुत किया गया अन्य तर्क यह है कि असहाय महिलाएं विशेषकर जो अधिक शिक्षित नहीं हैं और जिनके पास आजीविका का स्वतंत्र साधन नहीं है,को कार्यवाही वापस लेने के लिए दबाव और प्रपीड़ित किया जा सकता है और पीड़ित महिला को उसकी शिकायत को सुलझाए बिना शान्ति खरीदने के सिवाय कोई और विकल्प नहीं रह जाएगा । तथापि, यह तर्क बहुत सारवान नहीं हो सकता । यही तर्क शमनीय अपराधों के संबंध में भी जहां पीड़ित महिलाएं हैं, रखा जा सकता है । कुल मिलाकर न्यायालय की अनुज्ञा का सुरक्षोपाय संभावित युक्ति के विरुद्ध पर्याप्त नियंत्रण होगा जो पति और उसके नातेदारों/मित्रों द्वारा अपनाए जा सकते हैं । इस मामले में, न्यायालय का कृत्य केवल औपचारिकता नहीं है । न्यायिक मजिस्ट्रेट या कुटुम्ब न्यायालय न्यायाधीश से अधिक सचेत रहने और सक्रिय भूमिका निभाने की प्रत्याशा है । इस संबंध में, न्यायालय किसी महिला अधिवक्ता या वृत्तिक सलाहकार या विधिक सेवा प्राधिकरण के प्रतिनिधि की सहायता ले सकता है और संबद्ध महिला की परीक्षा इनमें से किसी एक की उपस्थिति में उसके चैम्बर में की जा सकती है । अनुकल्पतः, चैम्बर में पीड़ित महिला की परीक्षा के लिए महिला सहकर्मी की भी सहायता ली जा सकती है । प्रसामान्यतः, विचारण

मजिस्ट्रेटों/न्यायाधीशों को न्यायिक प्रशिक्षण केन्द्रों में प्रशिक्षण के अनुक्रम में लिंग संबंधी मुद्दों को संवेदनशीलता से विचार करने के लिए कहा जाता है । दिल्ली, बंगलौर, चेन्नई आदि जैसे शहरों में वैवाहिक विवादों के सौहार्दपूर्ण समाधान निकालने की प्रक्रिया में सक्षम और प्रशिक्षित मध्यस्थों को सम्मिलित किया जाता है । यद्यपि न्यायालय से धारा 498क के अधीन अपराध के शमन के लिए आवेदन पर विचार करने में सम्यक् सावधानी और सतर्कता से कार्य करने की प्रत्याशा है फिर भी, हमारा यह मत है निम्नलिखित अतिरिक्त सुरक्षोपायों को शामिल करना वांछनीय है :–

> भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध का शमन करने का आवेदन फाइल करने और व्यथित महिला का अधिमानतः महिला न्यायिक अधिकारी या जिला विधिक सेवा प्राधिकरण के प्रतिनिधि या सलाहकार या घनिष्ठसंबंधी की उपस्थिति में चैम्बर में पूछताछ करने के पश्चात् यदि मजिस्ट्रेट का यह समाधन हो जाता है कि पक्षकारों के बीच प्रथमदृष्टया स्वैच्छिक और उचित समाधान था तो मजिस्ट्रेट उस आशय को अभिलिखित करेगा और आवेदन की सुनवाई तीन मास या ऐसे अन्य पूर्व तारीख जिसको मजिस्ट्रेट न्यायहित में नियत करे, स्थगित करेगा । स्थगित तारीख को, मजिस्ट्रेट पुनः उसी तरह पीड़ित महिला का साक्षात्कार करेगा और अभियुक्त को सुनवाई का अवसर देने के पश्चात् अपराध का शमन करने की अनुज्ञा देने या इनकार करने का अंतिम आदेश पारित करेगा । इस बीच, व्यथित महिला को पर्याप्त आधारों पर अपराध का शमन करने के अपने पूर्व प्रस्ताव को प्रतिसंहृत करने का आवेदन फाइल करने की स्वतंत्रता होगी ।

5.7 तदनुसार, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 में उपधारा (2क) को जोड़ने का प्रस्ताव है । प्रस्तावित उपबंध यह सुनिश्चित करेगा कि अपराध के शमन का प्रस्ताव स्वैछिक और दबावमुक्त हो और शमन के प्रस्ताव के पश्चात् पत्नी के साथ दुर्बर्ताव न किया जाए । संयोगवश, यह धारा 498-क के अधीन अपराध का शमन करने के आवेदन पर विचार करते समय न्यायालय की सक्रिय भूमिका निभाने की आवश्यकता को रेखांकित करता है ।

5.8 ऐसे अन्य बिन्दु इस प्रकार हैं जिन पर इस मुद्दे का उत्तर देते समय ध्यान देने की आवश्यकता है कि क्या धारा 498क के अधीन अपराध को शमनीय बनाया जाए –

5.8.1 भारत के विधि आयोग ने अपनी 154वीं रिपोर्ट (1996) में धारा 20(2) से संलग्न सारणी में धारा 498-क को सम्मिलित करने की सिफारिश की थी जिससे कि न्यायालय की अनुज्ञा से इसका शमन किया जा सके । रिपोर्ट के संबंधित उद्धरण इस प्रकार हैं :–

> "हाल में, विभिन्न उच्च न्यायालयों ने समाज में सद्भाव और शान्ति के लिए पक्षकारों के बीच समझौते के कारण असंज्ञेय अपराधों की बाबत आपराधिक कार्यवाहियों का अभिखंडन किया है । उदाहरणार्थ, अरुण कुमार वोहरा बनाम रीतू वोहरा, निर्लेप सिंह बनाम पंजाब राज्य वाले मामलों में, भा. दं. सं. की धारा 406 के अधीन अपराधों की बाबत आपराधिक कार्यवाहियों, दहेज वस्तु या स्त्रीधन के न्यास के आपराधिक भंग और पति या पति के नातेदारों द्वारा स्त्री पर क्रूरता से संबंधित भा. दं. सं. की धारा 498-क के

अधीन अपराध को अभिखंडित किया गया है ।"

5.8.2 154वीं रिपोर्ट में जो कुछ कहा गया है, उसके सातत्य में, हम यह इंगित करते हैं कि सर्वोच्च न्यायालय ने बी. एस. जोशी बनाम हरियाणा राज्य[11] वाले मामले में दृढ़तापूर्वक यह प्रतिपादना अधिकथित किया कि न्याय के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उच्च न्यायालय द्वारा ऐसे पति और पत्नी के अनुरोध पर आपराधिक कार्यवाहयों को अभिखंडित करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन अंतनिर्हित शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है जिन्होंने मामले को सौहार्दतापूर्वक सुलझा लिया है और विद्वेष को समाप्त करने के इच्छुक हैं । इस मामले में अधिकथित सिद्धांत को निखिल मर्चेन्ट बनाम सी. बी. आई.[12] में अनुमोदन करते हुए उद्धृत किया गया है । तथापि, समतुल्य न्यायपीठ[13] ने इन विनिश्चयों की शुद्धता पर संदेह किया और वृहत्तर न्यायपीठ के विचार के लिए मामला निर्दिष्ट किया । निर्दिष्ट करने वाले न्यायपीठ के अनुसार न्यायालय गैर-शमनीय अपराधों का समन करने की अप्रत्यक्षतः अनुज्ञा नहीं दे सकता है ।

5.8.3 धारा 498क से संबंधित विधि आयोग की 154वीं रिपोर्ट की सिफारिश को 177वीं रिपोर्ट (2001) में दोहराया गया है । आयोग ने यह पाया है कि पिछले कई वर्षों से, उक्त अपराध को शमन करने के लिए व्यक्तियों और संगठनों से विधि आयोग को अनेक अभ्यावेदन प्राप्त हुए हैं ।

5.8.4 इसके अतिरिक्त, आपराधिक न्याय-प्रणाली के सुधार पर न्यायमूर्ति मलिमथ कमेटी की रिपोर्ट ने धारा 498क को शमनीय अपराध बनाने के

---

[11] पूर्वोक्त टिप्पण 6.
[12] पूर्वोक्त टिप्पण 7.
[13] ज्ञान सिंह बनाम पंजाब राज्य [2010 (12) स्केल 461]

अभिवाक् पर दृढ़ता से समर्थन किया । कमेटी ने यह मत व्यक्त किया :–

" कम सहनशील और आवेशी महिला छोटी-छोटी बातों पर भी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करा सकती है। परिणाम यह होता है कि पति और उसके परिवार के सदस्य तत्काल गिरफ्तार हो जाते हैं और उसे निलंबित कर दिया जाता है और नौकरी छूट जाती है । अभिकथित अपराध अजमानतीय होने के कारण निर्दोष व्यक्ति अभिरक्षा में कारागार में रहते हैं । भरण-पोषण का दावा आग में ईंधन डालने का करता है, विशेषकर यदि पति न दे सकता हो । अब महिला अपना विचार बदल सकती है और भूल जाने और क्षमा करने की सोच बना सकती है । पति भी की गई भूल को महसूस कर सकता है और स्नेहमय और मैत्रीपूर्ण संबंध के लिए नए अध्याय खोल सकता है । महिला पुनर्मिलन को पसन्द कर सकती है । किन्तु यह विधिक बाधाओं के कारण संभव नहीं हो सकता है । चाहे वह परिवाद को वापस लेकर सुधार क्यों न करना चाहती हो, वह ऐसा नहीं कर सकती क्योंकि अपराध अशमनीय है । पारिवारिक जीवन में वापस लौटने के दरवाजे बंद हो जाते हैं । इस प्रकार, वह अपने पैतृक कुटुम्ब की दया पर रह जाती है .....।

अतः यह धारा न तो पत्नी और न ही पति की सहायता करती है । अपराध अजमानतीय और अशमनीय होने के कारण निर्दोष व्यक्ति को कलंक और कठिनाई झेलने के लिए विवश करता है । ऐसे निर्दयी उपबंध जो अपराध को अजमानतीय और अशमनीय बनाता है, पुनर्मिलन के विरुद्ध प्रवर्तित रहता है । अतः, पति-पत्नियों को

एक साथ आने का अवसर देने के लिए इस अपराध को (क) जमानतीय ओर (ख) शमनीय बनाना आवश्यक है ।"

यद्यपि यह आयोग उपरोक्त पैरा में व्यक्त मताभिव्यक्तियों को समग्रतः पृष्ठांकित करने के लिए आनत नहीं है किन्तु उनमें से कुछ इसे शमनीय बनाने के हमारे निष्कर्ष को सुदृढ़ बनाते हैं ।

5.8.5 मलिमथ समिति के मतों और विधि आयोग की 154वीं रिपोर्ट की सिफारिशें आपराधिक विधि (संशेधन) विधेयक, 2003 (अगस्त, 2005) पर गृहमंत्रालय की विभाग-संबंधी संसदीय स्थायी समिति की 111वीं रिपोर्ट में अनुमोदन के साथ निर्दिष्ट की गई थी । स्थायी समिति ने इस प्रकार मत व्यक्त किया :

" विमुख पति-पत्नी को एक साथ लाने का अवसर उपलब्ध कराना वांछनीय है इसलिए,दंड प्रक्रिया संहिता की उपधारा (2) के अधीन सारणी में इस धारा को अंतःस्थपित करके भा. दं. सं. की धारा 498क के अधीन अपराध को शमनीय बनाना प्रस्तावित है ।"

5.8.6 दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक, 2006 पर उक्त स्थायी समिति (2008) की 128वीं रिपोर्ट में 111वीं रिपोर्ट में व्यक्त सिफारिश को दोहराया गया ।

5.8.7 उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के मत धारा 498क के अधीन अपराध को शमनीय मानने का एक अन्य औचित्य प्रदान करते हैं ।

राम गोपाल बनाम म. प्र. राज्य वाले मामले में पारित संक्षिप्त आदेश में उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि अन्य के साथ

धारा 498क के अधीन अपराधों को विधि में उपयुक्त संशोधन सम्मिलित करके शमनीय बनाया जा सकता है । बम्बई उच्च न्यायालय ने काफी पहले 1992 में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 में धारा 498-क को सम्मिलित करने के लिए उस धारा को संशेधित करने का ठोस सुझाव दिया था ।

प्रीति गुप्ता बनाम झारखंड राज्य वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्ति दलवीर भंडारी ने अधिवक्ताओं से धारा 498क के प्रत्येक शिकायत को आधारभूत मानवीय समस्या मानने और उस मानवीय समस्या के सौहार्दपूर्ण समाधान निकालने के लिए पक्षकारों की सहायता करने हेतु गंभीर प्रयास करने को प्रोत्साहित किया । उच्चतम न्यायालय ने मत व्यक्त किया कि न्यायालयों को इन शिकायतों पर विचार करते समय गहन सावधानी और सतर्कता बरतनी चाहिए और विचार करते समय व्यावहारिक वास्तविकताओं पर ध्यान देना चाहिए । इसके अतिरिक्त, यह मत व्यक्त किया गया कि : मामले को समाप्त करने के पूर्व, हम यह व्यक्त करना चाहते हैं कि विधान द्वारा संपूर्ण उपबंध पर गंभीरता से फिर से परिशीलन करने की अपेक्षा है । यह भी आम जानकारी का विषय है कि अधिकांश शिकायतों में घटना को बढ़ा-चढ़ा कर प्रस्तुत किया जाना प्रतिबिम्बित होता है । बहुत अधिकांश मामलों में अति विवक्षा की प्रवृत्ति का भी प्रतिबिम्बन होता है । उच्चतम न्यायालय ने तब निम्नलिखित मत व्यक्त किया : "विधान मंडल के लिए शिक्षित आम राय और व्यावहारिक वास्तविकताओं पर विचार करना और विधि के सुसंगत उपबंधों में आवश्यक परिवर्तन करना अनिवार्य है । हम रजिस्ट्रार को इस निर्णय की प्रति विधि आयोग और केन्द्रीय विधि सचिव, भारत सरकार को भेजने का निदेश देते हैं जो

समाज के वृहत्तर हित में समुचित कदम उठाने के लिए इसे माननीय विधि और न्याय मंत्री के समक्ष इसे प्रस्तुत करें ।"

5.9 एक अन्य पहलू लड़ रहे पति-पत्नी के बीच सुलह को प्रभावी बनाने पर बल देने वाली विधि की नीति है जिस पर ध्यान दिया जाना चाहिए । कुटुम्ब न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 9,हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 23(2) और विशेष विवाह अधिनियम, 1954 की धारा 34(2) के उपबंध न्यायालय पर सुलह और सौहार्दपूर्ण समाधान को सुकर बनाने के लिए आवश्यक कदम उठाने की बाध्यता अधिरोपित करते हैं ।

5.10 यह उल्लेख करना श्रेयस्कर है कि आंध्र प्रदेश राज्य विधान मंडल ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320(2) की दूसरी सारणी में निम्नलिखित अंतःस्थपित करके संशोधन किया :

किसी स्त्री के पति या पति के नातेदार द्वारा उनके प्रति क्रूरता करना	498-क	स्त्री के प्रति क्रूरता करना : परन्तु तीन मास की न्यूनतम अवधि न्यायालय के समक्ष समझौते के अनुरोध या आवेदन की तारीख से व्यपगत होगी और न्यायालय भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध का शमन करने के अनुरोध को स्वीकार कर सकता है बशर्ते कोई पक्षकार मध्यवर्ती अवधि में मामले को वापस न ले ।

यह संशोधन करते समय विभिन्न मामलों में उच्च न्यायालय द्वारा

व्यक्त मताभिव्यक्तियों पर विचार किया गया । संशोधन 1 अगस्त, 2003 को प्रवृत्त हुआ ।

हमारी सिफारिश सारतः इसी तरह है ।

5.11 विधि आयोग को प्राप्त उत्तरों में प्रतिबिम्बित अत्यधिक मत और ऐसे विचार जो आयोग को जिला और अधीनस्थ न्यायपालिका के सदस्यों, अधिवक्ताओं और विधि छात्रों से विचार-विमर्श के अनुक्रम में प्राप्त हुए हैं, दूसरा कारण है जिससे हम धारा 498क के अधीन अपराध को न्यायालय की अनुज्ञा से शमनीय बनाने के लिए विधि का संशोधन करने की सिफारिश करना चाहते हैं । उत्तर देने वालों की सूची उपाबंध 1-ख पर है जिनसे आयोग को विचार प्राप्त हुए । शमनीयता के बिन्दु को छूने वाले ऐसे मतों का विश्लेषण उपाबंध 1-क पर है । आयोग द्वारा प्रकाशित धारा 498-क के विभिन्न पहलुओं पर परामर्श पत्र-सह-प्रश्नावली यहां उपाबंध-2 के रूप में संलग्न है ।

5.12 महिला अधिकारियों सहित न्यायिक अधिकारियों के सम्मेलन में, अपराध को शमनीय बनाने के पक्ष में लगभग एकमत था । ऐसी महिला अधिवक्ताओं ने प्रस्ताव का विरोध नहीं किया जो विशाखापतनम, चेन्नई और औरंगाबाद में हुए सम्मेलनों में उपस्थित थी । दिल्ली न्यायिक ऐकेडमी में विभिन्न पंक्तियों के लगभग 35 न्यायिक अधिकारियों के साथ हुए हाल ही के सम्मेलन में शमनीयता के बिन्दु पर मतैक्य था । तथापि, कुछ न्यायाधीशों ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320(2) के अधीन शमन का अंतिम आदेश पारित करने के लिए 3 मास की गर्भावधि अनुज्ञात करने के बारे में आपत्ति जतायी । यह इंगित किया गया कि इस बारे में कुछ

नमनीयता होनी चाहिए और 3 मास की अवधि का विशेषकर वहां कठोर पालन करने की आवश्यकता नहीं है जहां सिविल विवादों से संबंधित समझौते का पैकेज हो । इस सुझाव को ध्यान में रखते हुए आयोग ने यह उपबंध किया है कि न्याय हित में, मजिस्ट्रेट कम समय के भीतर आदेश पारित कर सकता है ।

5.13 अतः, विधि आयोग का यह सुविचारित मत है कि भा. दं. सं. की धारा 498क के अधीन अपराध को विधि की अनुज्ञा से शमनीय बनाया जाए । तदनुसार, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320(2) का भाग गठित करने वाली सारणी-2 में धारा 494 को निर्दिष्ट करने वाली प्रविष्टि के पश्चात् और धारा 500 से संबंधित प्रविष्टि के पूर्व निम्नलिखित अंतःस्थापित किया जाए ।

किसी स्त्री के पति या पति के नातेदार द्वारा उसके प्रति क्रूरता किया जाना	498क	ऐसी स्त्री जिसके प्रति क्रूरता की गई है ।

उपधारा (2क) दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 में जोड़ी जाएगी, जैसा पूर्वोक्त पृष्ठ 17 के पैरा 5.6 में उपवर्णित है ।

भा. दं. सं. की धारा 324

5.14 हमारे विचारित मतानुसार, भा. दं. सं. की धारा 324 (खतरनाक आयुधों या साधनों द्वारा स्वेच्छया उपहति कारित करना) के अधीन अपराध को शमनीय बनाया जाए । अपराध कारावास जो तीन वर्ष तक का है और

जुर्माने से दंडनीय है । पुरानी संहिता और 1973 की नई संहिता दोनों में, उक्त अपराध और धारा 325 के अधीन गंभीर अपराध न्यायालय की अनुज्ञा से शमनीय अपराध माने जाते थे । विधि आयोग ने अपनी 154वीं और 177वीं रिपोर्ट में यह सिफारिश की थी कि कई अन्य अपराधों के साथ इन दो अपराधों को धारा 320(1) से संलग्न सारणी में परिवर्तित किया जाए जिससे कि न्यायालय की अनुज्ञा से उसका शमन किया जा सके । तथापि, धारा 324 को दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2005 द्वारा शमनीय अपराधों की सूची से हटा दिया गया । आयोग ने इस पृष्ठभूमि की जांच जिसमें इस अपराध को हटाया गया था, पहली नजर में, यह प्रतीत हुआ कि इसे अनजाने गलती के कारण हटाया गया । किन्तु, यह ऐसा प्रतीत नहीं होता । दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक, 1994 में यह प्रस्तावित किया गया भा. दं. सं. की धारा 324 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 की उपधारा (2) की सारणी में से लोप किया जाए । ऐसे प्रस्ताव का प्रकट कारण यह था कि अभियुक्त द्वारा परिवादी को समझौते के लिए सहमत होने हेतु दबाव डालकर उपबंध का दुरुपयोग किए जाने की संभावना है । तथापि, यह तर्क बिलकुल भ्रामक है । अधिकांश शमनीय अपराधों के लिए ऐसा ही तर्क किया जा सकता है । 1990 के दौरान गृह मंत्रालय द्वारा आरंभ किया गया प्रस्ताव 2005 में सफल हुआ और दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2005 द्वारा धारा 324 का शमनीय अपराधों की सूची में से लोप कर दिया गया । 1994 या इसके पूर्व जो किया जाना ईप्सित था, वर्ष 2005 में पूरा हुआ । यह उल्लेख करना रुचिकर है कि इसके पश्चात् एक वर्ष के भीतर, दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक, 2006 में धारा 324 को धारा 320 में सम्मिलित

किए जाने की ईप्सा की गई । यह प्रतीत होता है कि उक्त संशोधन का प्रस्ताव लाने में मंत्रालय ने जिस बात को महत्व दिया था, वह विधि आयोग की यह सिफारिश थी कि धारा 324 को धारा 320(2) के अधीन सारणी से अंतरित कर इसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320(1) की सारणी में सम्मिलित किया जाए । तदनुसार, विधेयक के खंड 30 में इस परिवर्तन का उपबंध था । तथापि, दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 (2009 का अधिनियम सं. 5) यह दर्शित करता है कि उक्त परिवर्तन को संसद द्वारा अनुमोदित नहीं किया गया और धारा 324 अशमनीय अपराध बना रहा । चर्चा के दौरान राज्य सभा के एक सदस्य द्वारा व्यक्त मत के अनुसरण में ऐसा कदम उठाया गया ।

5.15.1 18 दिसम्बर, 2008 को पूर्वोक्त दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक, 2006 पर राज्य सभा में चर्चा से यह स्पष्ट है कि प्रस्ताव को एक विख्यात महिला सांसद के अनुरोध पर छोड़ दिया गया । हम उस बात को उद्धृत करते हैं जो माननीय सांसद ने चर्चा में भाग लेते समय कहा :

> " मैंने इन कुछ पहलुओं पर संशोधन का प्रस्ताव पेश किया है । पहला प्रस्ताव यह है । यह बहुत महत्वपूर्ण है । यह धारा 324 खतरनाक आयुधों या साधनों द्वारा स्वेच्छया उपहति कारित करना, के बारे में है । यह उपबंध करती है कि 'उस दशा के सिवाय जिसके लिए धारा 334 में उपबंध है, जो कोई असन, वेधन या काटने के किसी उपकरण द्वारा या किसी ऐसे उपकरण द्वारा जो यदि आक्रामक आयुध के तौर पर उपयोग में लाया जाए, तो उससे कारित होना संभाव्य है, या अग्नि पर या किसी तप्त पदार्थ

द्वारा....।' अब, हमारे पास ऐसे मामले हैं । प्रत्येक व्यक्ति जलाकर मृत्यु कारित करने की इस पूरी प्रवृत्ति को जानता है । यदि आप धारा 324 को शमनीय अपराध के अधीन लाना चाहते हैं जिसका प्रायः ऐसे मामलों में उपयोग किया जाता है.....आप उसे पहली सारणी में सम्मिलित कर रहे हैं..... मैं सोचती हूं, यह बिल्कुल अन्यायोचित हो रहा है । अतः, मैं माननीय गृह मंत्री से आग्रह करती हूं, कृपया ऐसा न करें और कृपया इसे शमनीय अपराधों से निकाल दें ।"

5.15.2 माननीय गृह मंत्री ने इस सुझाव को स्वीकार किया । तदनुसार, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 की परिधि के भीतर धारा 324 को पुनः लाने का सरकार का प्रस्ताव असफल हो गया ।

5.15.3 संभवतः, माननीय सदस्या का तर्क वधू दाह के मामलों के संबंध में था । आग या तप्त पदार्थ द्वारा उपहति कारित करना धारा 324 का एक संघटक है । पत्नियों को जलाकर उपहति कारित करने के अपराध की बढ़ती घटनाओं को ध्यान में रखते हुए अपराध को शमनीय बनाने की अनुज्ञा नहीं दी जानी चाहिए । यह बहुत अच्छा होता यदि कोई ऐसा मामला जिसकी परिणति अन्यथा मृत्यु होती, का अंत साधारण उपहति पहुंचाने से होता । किन्तु, क्रूरता की मात्रा और अपराध की कठोरता पर सम्यक् रूप से ध्यान दिया जाना चाहिए और अपराधी को पर्याप्त दंड दिया जाना चाहिए । इसके अतिरिक्त सारणी-I में सम्मिलित करने का परिणाम यह होगा कि ऐसे मामलों में भी जहां पीड़िता महिला पर समझौता करने के लिए दबाव डाला गया होगा वहां भी अभियोजन उपशमित हो जाएगा ।

सारतः, माननीय सांसद की टिप्पणी के पीछे यही तर्क प्रतीत होता है ।

5.16 हमने उपरोक्त पैरा 1.1 में उद्धृत दिवाकर सिंह वाले मामले में उच्चतम न्यायालय की मताभिव्यक्तियों का ध्यान किए बिना तर्क की इस दिशा पर उत्सुकतापूर्वक विचार किया । अब भी आयोग भा. दं. सं. की धारा 324 को शमनीय अपराधों की सूची से अपवर्जित करने का अच्छा और सारयुक्त कारण नहीं पाता, फिर भी, हम इस अभिवाक् में विशिष्टता पाते हैं कि इसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320(2) के अधीन सारणी 2 में स्थान दिया जाए न कि धारा 320(1) के अधीन सारणी 1 में । क्रूर पतियों और उनके सगे-संबंधियों द्वारा स्त्री को कारित मृत्यु या शारीरिक क्षति के मामले प्रायः निरन्तर भा. दं. सं. की धारा 509 के साथ पठित धारा 304-ख, 307, 324 या 326 के अधीन अधिक गंभीर अपराधों के लिए अभियोजन प्रवर्तित करते हैं । भा. दं. सं. की धारा 324 का अवलंब ऐसे मामलों में लगभग नहीं लिया जाता है । यदि महिला- परिवादों से संबंधित धारा 324 के अधीन कुछ अभियोजन हैं तो वह मुश्किल से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 की सामान्य स्कीम और प्रयोजन से विचलित होने का औचित्य प्रदान करेगा । जब बहुत अधिक मामलों में इसे शमनीय बनाने का औचित्य है तो विरल स्थितियों से अंतर नहीं पड़ता । इसके अतिरिक्त, ऐसी आशंका की परवाह के लिए जो यदि कुछ मामलों में उपयोगी हो सकता है तो इसे सारणी-2 की इसकी मूल स्थिति में प्रतिधारित करना वांछनीय और समुचित है । दाह या अन्यथा के साधनों द्वारा स्त्री को अपहानि कारित करने के मामलों का ध्यान किए बिना, समग्र पहलुओं पर ध्यान देते हुए, यह एक उचित मामला है जहां न्यायालय की अनुज्ञा पर बल दिया जाना चाहिए । दाह द्वारा महिला को उपहति कारित करने के

मामलों में, न्यायालय से अनुज्ञा मंजूर करने में नियंत्रित रहने की प्रत्याशा है । इस तरह के अपराध में न्यायालय की अनुज्ञा के सुरक्षोपाय को बनाए रखने की आवश्यकता है ।

5.17 तदनुसार, हम सिफारिश करते हैं कि भा. दं. सं. की धारा 324 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 की परिधि के भीतर सम्मिलित किया जाए और इसकी उपधरा (2) से संलग्न सारणी 2 की अपनी मूल स्थिति में प्रतिधारित किया जाए । धारा 324 विधि आयोग की 154वीं रिपोर्ट की सिफारिश के अनुसार सारणी-1 में परिवर्तित किए जाने के बजाय सारणी-2 में धारा 325 के साथ बना रहने दिया जा सकता है । सारणी-1 में परिवर्तित करने की विवक्षाओं पर उस रिपोर्ट में आयोग द्वारा विचार नही किया गया है । हमारे मतानुसार, दिवाकर सिंह वाले मामले मे धारा 324 के अधीन अपराध को शमनीय बनाने की उच्चतम न्यायालय की मताभिव्यक्ति ठोस आधार पर आधारित है ।

भा. दं. सं. की धारा 326

5.18 खतरनाक हथियारों या साधनों द्वारा स्वेच्छया घोर उपहति कारित करना धारा 326 के अधीन दंडनीय है और निर्देश की सुविधा के लिए धारा 320 और 326 को नीचे उद्धृत किया जा रहा है :–

"320. घोर उपहति – उपहति की केवल नीचे लिखी किस्में 'घोर' कहलाती हैं –

पहला – पुंस्त्वहरण

दूसरा – दोनों में से किसी भी नेत्र की दृष्टि का स्थायी

विच्छेद ।

तीसरा – दोनों में से किसी भी कान की श्रवण शक्ति का स्थायी विच्छेद ।

चौथा – किसी भी अंग या जोड़ का विच्छेद ।

पांचवां – किसी भी अंग या जोड़ की शक्तियों का नाश या स्थायी ह्रास ।

छठा – सिर या चेहरे का स्थायी विद्रुपिकरण ।

सातवां – अस्थि या दांत का भंग या विसंधान ।

आठवां – कोई उपहति जो जीवन को संकटापन्न करती है या जिसके कारण उपहृत व्यक्ति बीस दिन तक तीव्र शारीरिक पीड़ा में रहता है या अपने मामूली कामकाज को करने के लिए असमर्थ रहता है ।

326. खतरनाक आयुधों या साधनों द्वारा स्वेच्छया घोर उपहति कारित करना –

उस दशा के सिवाय जिसके लिए धारा 335 में उपबंध है, जो कोई असन, वेधन या काटने के किसी उपकरण द्वारा या किसी ऐसे उपकरण द्वारा, जो यदि आक्रामक आयुध के तौर पर उपयोग में लाया जाए, तो उससे मृत्यु कारित होना संभव्य है, या अग्नि या किसी तप्त पदार्थ द्वारा, या किसी विष या संक्षारक पदार्थ द्वारा, या किसी विस्फोटक

पदार्थ द्वारा, या किसी ऐसे पदार्थ द्वारा, जिसका श्वास में जाना या निगलना या रक्त में पहुंचना मानव शरीर के लिए हानिकारक है, या किसी जीव जन्तु द्वारा स्वेच्छया घोर उपहति कारित करेगा वह आजीवन कारावास से या दोनों में से किसी भांति के कारावास से जिसकी अवधि दस वर्ष तक हो सकेगी, दण्डित किया जाएगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा ।

5.9 धारा 326 के अधीन अपराध आजीवन कारावास या ऐसी अवधि के कारावास से जो 10 वर्ष तक हो सकता है और जुर्माने से दंडनीय है । खतरनाक आयुधों या साधनों का उपयोग किए बिना स्वेच्छया घोर उपहति कारित करना पुरानी दंड संहिता में शमनीय अपराध रहा है और यह नई संहिता में भी ऐसा ही है । भा. दं.सं. की धारा 325 के अधीन अपराध के लिए दंड 7 वर्ष या कम का है । भा. दं. सं. के किसी ऐसे अपराध को शमनीय नहीं बनाया गया है जिसके लिए दंड 7 वर्ष से अधिक है । मूल सिद्धांत यह है कि अपराध की गंभीरता पर सम्यक् रूप से विचार किया जाना चाहिए । धारा 326 के अधीन आने वाले अभियुक्त ने न केवल घोर उपहति कारित किया बल्कि पीड़ित के जीवन और स्वतंत्रता पर ध्यान दिए बिना खतरनाक आयुध से क्रूरता से कार्य किया । धारा 326 के अधीन अपराध हत्या करने के प्रयास के अपराध (धारा 307) या धारा 304 के अधीन अपराध की सीमारेखा पर आता है । सिर या चेहरे का विद्रूपिकरण (एसिड, आदि फेंककर), पुंस्त्वहरण, नेत्र दृष्टि या श्रवणशक्ति का स्थायी विच्छेद और किसी भी अंग या जोड़ की शक्तियों का नाश या स्थायी ह्रास जैसे हिंसक कार्य धारा 326 की परिधि के भीतर आते हैं । यह एक बहुत गंभीर अपराध है और पीड़ित तथा अभियुक्त के बीच समझौते को विधि की दृष्टि से मान्यता नही दी जानी चाहिए । धारा 326 से संबद्ध कई अपराध

हैं अर्थात् धारा 327 (संपत्ति उद्यापित करने के लिए उपहति कारित करना), धारा 328 (विष के साधनों द्वारा उपहति कारित करना) और धारा 329, 330 और 331 (संपत्ति/संस्वीकृति उद्यापित करने के लिए उपहति/घोर उपहति कारित करना) जो आजीवन कारावास या 10 वर्ष तक के कारावास से दंडनीय है । इनमें से किन्हीं अपराधों को शमनीय नहीं बनाया गया है । विधायी नीति सही है कि ऐसे गंभीर अपराधों को शमनीय नहीं बनाया जाना चाहिए । शमन के जाल को असम्यक् रूप से खींचना वांछनीय नहीं है । मात्र यह तथ्य कि न्यायालयों में लंबित मामलों की कुछ संख्या कम हो जाएगी यदि अपराधों को शमन करने की अनुज्ञा दे दी जाए, शमनीय अपराधों की सूची को बढ़ाने को न्यायोचित ठहराने का विधिमान्य तर्क नहीं है जिससे कि ऐसे बहुत गंभीर और घोर प्रकृति के अपराधों को सम्मिलित किया जा सके जो विधि और व्यवस्था को जोखिम में डालते हैं । जैसाकि पहले कहा गया है, विधि को शमन की समस्या से निपटने के लिए सतर्क और संतुलित दृष्टिकोण अपनाना चाहिए ।

5.20 हमने राम गोपाल बनाम म. प्र. राज्य वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के एकमात्र मताभिव्यक्ति के कारण धारा 326 पर इतना अधिक कहा कि धारा 326 जैसे अपराधों को शमनीय बनाया जाना चाहिए । आगे कोई चर्चा नहीं की गई क्योंकि न्यायालय ने विधि आयोग और विधि मंत्रालय से शमनीय अपराधों की सूची में और अपराध सम्मिलित करने के पहलू पर ध्यान देने की अपेक्षा की है । सुस्पष्टतः, कोई विधि अधिकथित नहीं की गई है और निर्णय देने में केवल प्रथमदृष्टया मत व्यक्त किया गया है । उच्चतम न्यायालय ने उचित ही यह विषय सरकार के विनिश्चय और विधि आयोग की सिफारिश पर छोड़ दिया है । आनुषगिकतः, मनोज शर्मा

बनाम राज्य वाले मामले मे उच्चतम न्यायालय के पूर्व विनिश्चय को निर्दिष्ट करना प्रासंगिक होगा । यह इस प्रकार व्यक्त किया गया है :

> "इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि भा. दं. सं. की धारा 302 या धारा 395, 307 या 304ख जैसे अन्य गंभीर अपराधों के मामलों का शमन नहीं किया जा सकता है, अतः इन उपबधों के अधीन कार्यवाहियों को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन उच्च न्यायालय द्वारा अपनी शक्तियों का प्रयोग कर या समझौते के आधार पर रिट अधिकरिता के अधीन अभिखंडित नहीं कर सकता । तथापि, कुछ अन्य मामलों में (सिविल प्रकृति की तरह) उच्च न्यायालय कार्यवाहियों को अभिखंडित कर सकता है यदि पक्षकार सौहार्दपूर्ण समझौता करते हैं चाहे उपबंध शमनीय न हो । सीमा-रेखा कहां खींची जाए, का विनिश्चय इस न्यायालय के कुछ बाद वाले विनिश्चयों में, अधिमानतः वृहत्तर न्यायपीठ द्वारा किया जाएगा (ताकि इसे और प्राधिकृत बनाया जा सके) ।"

5.21 आयोग शमनीय अपराधों की सुअधिकथित स्कीम में सारतः छेड़छाड़ करने और प्रथमतः न्यायालयों की कार्यसूची से छुटकारा पाने के अधार पर मार्ग दर्शित होने के लिए तैयार नहीं है ।

भा. दं. सं. के अधीन अन्य अपराध

5.22.11 धारा 147 (बल्वा करना) कारावास से दंडनीय है जो दो वर्ष तक या जुर्माना या दोनों तक हो सकता है : बल्वा करने को धारा 146 में परिभाषित किया गया है । जब कभी विधिविरुद्ध जमाव द्वारा या उसके किसी सदस्य द्वारा ऐसे जमाव के सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में बल

या हिंसा का प्रयोग किया जाता है, बल्वा करने का अपराध गठित करता है । मध्य प्रदेश में, वर्ष 1999 में एक संशोधन किया गया जिसके द्वारा धारा 147 (बल्वा करना) को इस परंतुक के साथ धारा 320(2) से संलग्न सूची के अधीन लाया गया : "परंतु अभियुक्त ऐसे अन्य अपराध से आरोपित न हो जो शमनीय नहीं है ।" ऐसा व्यक्ति जिसके विरुद्ध अपराध कारित करने के समय बल या हिंसा का प्रयोग किया गया है, शमन करने का सक्षम व्यक्ति है ।

5.12.12 आयोग का यह मत है कि इसी तरह, भा. दं. स. की धारा 147 के अधीन बल्वा करने के अपराध को शमनीय बनाया जा सकता है और इसे धारा 320(2) की परिधि के भीतर लाया जा सकता है ।

5.22.13 यह इंगित किया जा सकता है कि विधि आयोग ने अपनी 41वीं रिपोर्ट (1969) में इस आधार पर भा. दं. सं. की धारा 147 समेत कतिपय अपराधों को शमनीय बनान के सुझाव को स्वीकार नहीं किया कि लोक शान्ति, व्यवस्था और सुरक्षा को प्रभावित करने वाले किसी मामले में, अपराध द्वारा प्रत्यक्षतः व्यथित व्यक्ति के लिए अपराध का शमन करने का विकल्प नहीं छोड़ा जाना चाहिए । काफी पहले व्यक्त इस मत पर फिर से विचार करने की आवश्यकता है । बल्वा हमेशा लोक शांति या व्यवस्था को क्षुब्ध नहीं कर सकता । यह प्राइवेट विवाद के परिणामस्वरूप हुए हाथापाई से हो सकता है या उक्त अपराध बहुरंग भीड़ द्वारा किसी आन्दोलन के अनुक्रम में भी किया जा सकता है । हमारा यह मत है कि परंतुक के परिवर्धन के साथ दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320(2) की परिधि के भीतर भा. दं. सं. की धारा 147 को सम्मिलित करने में कोई नुकसान

नहीं है । परंतुक धारा 147 के अधीन अपराध के शमन को निवारित करेगा यदि कोई अन्य गंभीर अपराध भी किया गया है ।

5.22.2 धारा 380. निवास गृह में चोरी – अधिकतम दंड 7 वर्ष का कारावास और जुर्माना है । यह अपराध इस परंतुक के अधीन शमनीय बनाया जाना चाहिए कि चुराई गई संपत्ति का मूल्य पचास हजार रुपए से अधिक न हो ।

5.22.3 धारा 384 – उद्दापन – अधिकतम दंड 3 वर्ष का कारावास या जुर्माना या दोनों है ।

5.22.4 धारा 385 – उद्दापन करने के लिए (या ऐसा करने का प्रयास करने के लिए) किसी व्यक्ति को क्षति के भय में डालना अधिकतम दंड 2 वर्ष या जुर्माना या दोनों है ।

5.22.5 धारा 461 : ऐसे पात्र को, जिसमें संपत्ति है, बेईमानी से तोड़कर खोलना – अधिकतम दंड 2 वर्ष का कारावास या जुर्माना या दोनों है ।

5.22.6 धारा 489 : क्षति कारित करने के आशय से संपत्ति चिह्न को बिगाड़ना – अधिकतम दंड 1 वर्ष का कारावास या जुर्माना या दोनों है ।

5.22.7 धारा 507 : अनाम संसूचना द्वारा आपराधिक अभित्रास – अधिकतम दंड पूर्ववर्ती धारा अर्थात् धारा 506 द्वारा अपराध के उपबंधित दंड के अलावा 2 वर्ष का कारावास है । धारा 506 के दो भाग हैं । प्रथम भाग के अधीन आने वाले अभित्रास के लिए, अधिकतम दंड दो वर्ष का कारावास या जुर्माना या दोनों है । धारा 507 के अधीन शमन की अनुज्ञा आपराधिक अभित्रास की बाबत दी जा सकती है जो प्रथम भाग के अधीन

आता है । मृत्यु या घोर उपहति कारित करने की धमकी दूसरे भाग के अंतगत आती है जो 7 वर्ष के कारावास से दंडनीय है और यह एक गंभीर अपराध है जो प्रभावित व्यक्ति को पर्याप्त तंग किए जाने का स्रोत है । अतः, आयोग यह महसूस करता है कि इसे अशमनीय बना रहने दिया जाए । इस समय, धारा 506 और 508 धारा 320(1) की सारणी 1 के अधीन शमनीय हैं । धारा 507 को धारा 320(1) के अधीन उस सीमा तक शमनीय बनाया जा सकता है जहां तक इसका संबंध धारा 506 के प्रथम भाग के अधीन आने वाले अपराध से है ।

5.22.8 दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 की परिधि के भीतर पहल से ही सम्मिलित अपराधों की प्रकृति को ध्यान मे रखते हुए उपरोक्त वर्णित 7 अपराधों को भी शमनीय अपराधों के रूप में वर्गीकृत करने में कोई अपहानि नहीं है । धारा 380 जिसके लिए न्यायालय की अनुज्ञा अपेक्षित होनी चाहिए के सिवाय उन्हें सारणी-1 में सम्मिलित किया जा सकता है । इस तथ्य को ध्यान मे रखते हुए न्यायालय की अनुज्ञा वांछनीय है कि ऐसे लोगों में से अधिकांश जो अपराध करते हैं, आदतन अपराधी हैं ।

5.22.9 यह उल्लेख करने की आवश्यकता है कि पूर्वोक्त उपवर्णित सात अपराधों की बाबत अभियोजन संभवतः धारा 380 के सिवाय कई नहीं हो सकते हैं । न्यायालयों द्वारा कई मामलों का निपटान नहीं किया जा सकता है यदि उन अपराधों को शमनीय बनाया जाता है । तथापि, यथापूर्वोक्त, मामलों के लंबित रहने की संख्या का कम करना द्वितीयक विचार है ।

5.23.1 विषय को समाप्त करने के पूर्व, हम उस बात को दोहराते हैं जो पैरा 3.5 में कही गई है। तदनुसार, हम सुझाव देते हैं कि दंड प्रक्रिया

संहिता की धारा 320 की उपधारा (3) को संशोधित किया जाए जिससे कि भा. दं. सं. की धारा 120ख के अधीन अपराध को सम्मिलित किया जा सके । तब संशोधित उपबंध इस प्रकार पढ़ा जाएगा " जब कोई अपराध इस धारा के अधीन शमनीय हो तो ऐसे अपराध का दुष्प्रेरण या ऐसे अवरोध के किए जाने का प्रयास (जब ऐसा प्रयास स्वयं अपराध हो) **या ऐसे अपराध को करने का आपराधिक षडयंत्र** या वह अभियुक्त भारतीय दंड संहिता की धारा 34 या 149 के अधीन दायी है, का शमन इसी तरह से हो सकेगा" (जोड़े गए शब्दों को मौटे अक्षरों मे दर्शाया गया है) ।

5.23.2 यह इंगित किया जाता है कि आपराधिक षडयंत्र धारा 120-ख के अधीन दंडनीय एक स्वतंत्र अपराध है । इसमें दो उपधराएं हैं । दूसरी उपधारा, उपधारा (1) के अधीन दंडनीय अपराध करने के षडयंत्र से भिन्न आपराधिक षड्यंत्र के बारे में है । उपधारा (2) के अधीन उपबंधित दंड 6 मास की अधिकतम अवधि का कारावास या जुर्माना या दोनो है । उपधारा (1) मृत्यु या आजीवन कारावास या दो वर्ष या अधिक की अवधि के कठोर कारावास से दंडनीय अपराध करने के आपराधिक षडयंत्र को निर्दिष्ट करती है । अपराधी उसी रीति से दंडनीय होगा मानो उसने ऐसे अपराध को दुष्प्रेरित किया । प्रस्तावित संशोधन का फायदा उपलब्ध नहीं होगा यदि मुख्य अपराध अन्यथा शमनीय नहीं है ।

.....

6. सिफारिशें

6.1 मोटे तौर पर, ऐसे अपराध जो राज्य की सुरक्षा को प्रभावित करते हैं या जिनका आम जनता पर गंभीर प्रभाव पड़ता है, का शमन करने की अनुज्ञा नही दी जानी चाहिए । इसी प्रकार, घोर प्रकृति के अपराधों का भी शमन नहीं किया जाना चाहिए । अपराधों की शमनीयता पर विधि की नीति जटिल है और विनिश्चय पर पहुंचने के लिए कोई नियमनिष्ठ फार्मूला उपलब्ध नहीं है । शमनीय और अशमनीय अपराधों की पहचान करने के लिए समग्र और संयोजित दृष्टिकोण की आवश्यकता है ।

6.2 यह कि न्यायालयों में मामलों की बाढ़ आ गई है इसलिए, शमनीयता के लिए अधिक से अधिक अपराधों की पहचान की जाए, केवल द्वितीयक विचार है ।

6.3 दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 की उपधारा (3) में कोष्ठक के शब्दों के पश्चात् और "या जहां अभियुक्त दायी है" शब्दों के पश्चात् निम्नलिखित शब्द जोड़ा जाएगा :

" या ऐसा अपराध करने के आपराधिक षड्यंत्र"

6.4 भा. दं. सं. की धारा 498क को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320(2) के अधीन शमनीय बनाया जाए जिससे कि न्यायालय की अनुज्ञा से इसका शमन किया जा सके । तथापि, यह सुनिश्चित करने के लिए कि संयोजन की प्रस्थापना स्वैच्छिक और दबावमुक्त है, धारा 498क के अधीन अपराध का शमन करने के आवेदन पर विचार करने की प्रक्रिया अधिकथित

करते हुए धारा 320 में उपधारा (2क) सम्मिलित करना प्रस्तावित है । उक्त उपधारा (2क) का उल्लेख पूर्वोक्त पैरा 5.6 में किया गया है ।

6.5 भा. दं. सं. की धारा 324 को न्यायालय की अनुज्ञा से शमनीय बनाया जाना चाहिए । तदनुसार, इसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320(2) की परिधि के भीतर लाया जाएगा ।

6.6 भा. दं. सं. की धारा 326 (खतरनाक आयुधों द्वारा घोर उपहति कारित करना) को शमनीय नहीं बनाया जाना चाहिए ।

6.7 भा. दं. सं. की धारा 147 के अधीन बल्वा करने के अपराध को इस परंतुक के परिवर्धन के अधीन रहते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320(2) से संलग्न सारणी में इसे सम्मिलित कर शमनीय बनाया जाए परन्तु अभियुक्त ऐसे अन्य अपराध से आरोपित न हो जो शमनीय नहीं है ।

6.8 भा.0. दं. सं. के निम्नलिखित छह अपराधों को शमनीय बनाया जाए : धारा 380 (निवास स्थान मे चोरी) इस परंतुक के अधीन कि चुराई गई संपत्ति मूल्य 50,000/- रुपए से अधिक नहीं है ; धारा 384 (उद्दापन) ; धारा 385 (किसी व्यक्ति का क्षति के भय में डालकर उद्दापन) ; धारा 461 (ऐसे पात्र को, जिसमें संपत्ति है, बेईमानी से तोड़कर खोलना) ; धारा 489 (क्षति कारित करने के आशय से संपत्ति-चिह्न को बिगाड़ना) ; धारा 507 (अनाम संसूचना द्वारा आपराधिक अभित्रास) इस शर्त के अधीन रहते हुए कि शमन धारा 506 के पहले भाग के अधीन आने वाले आपराधिक अभित्रास तक सीमित होगा ।

ह०

(न्यायमूर्ति पी. वी. रेड्डी)

अध्यक्ष

ह०

(न्यायमूर्ति शिव कुमार शर्मा)

सदस्य

ह०

(अमरजीत सिंह)

सदस्य

ह०

(डा. ब्रह्म अग्रवाल)

सदस्य-सचिव

उपाबंध 1-क

शमनीयता से संबंधित भा. दं. सं. की धारा 498क की प्रश्नावली के 338 उत्तरों का विश्लेषण इस प्रकार है :

	व्यष्टि	संगठन	पदधारी/न्यायिक अधिकारी
अशमनीय	52(7 महिला)	6 (3 महिला संगठन)	123 (9 महिला)
अशमनीय	21 (4 महिला)	10(6 महिला संगठन)	6
अशमनीय और जमानतीय	11 (1 महिला)	6(2 महिला संगठन)	0

टिप्पण :

1. निरसन और वहीं अशमनीयता की बात करने वाले व्यष्टिक/संगठन/ पदधारी की संख्या 86 है, जिसका यह अभिप्राय है कि इसे शमनीय बनाए जाने के बजाए इसे एक साथ निरसित कर दिया जाए । अन्यथा, दो विचार एक दूसरे से संगत नहीं हैं ।

2. शमनीयता के बारे में, ऐसे व्यष्टि/संगठन/ पदधारी जिन्होंने इस पहलू पर कोई टिप्पणी नहीं दी, की संख्या 33 (4 महिला) हैं ।

3. केवल निरसित किया जाए – 1

उपाबंध 1 – ख

धारा 498क, भा. दं. सं. के संबंध में प्रश्नावली के प्रत्यर्थियों की सूची

(शमनीयता)

व्यक्तिगत :

सर्वश्री/सुश्री

1. सुश्री स्वाति गोयल, अहमदाबाद
2. नीरज गुप्ता, दिल्ली
3. विवेक श्रीवास्तव, vivek_srivastav_in@yahoo .co.in
4. सतीश के. मिश्रा, दिल्ली
5. कलपक शाह, अहमदाबाद
6. समीर झा, sk_jha95@yahoo.co.in
7. खड़क मेहरा, नैनीताल
8. सौरभ ग्रोवर, sgrover1973@gmail.com
9. कोमल सिंह, नई दिल्ली
10. कौशलराज भट्ट, अहमदाबाद
11. अलका शाह, अहमदाबाद

12. सौमिल शाह, अहमदाबाद

13. त्रिलोक शाह, अहमदाबाद

14. अल्पक शाह, अहमदाबाद

15. भावना शाह, अहमदाबाद

16. कौशल किशोर और विशाखापटनम के 27 अन्य निवासी

17. आईमामित, iamamitb1976@rediffmail.com

18. विष्णुवर्धन वेलागला, vvrvelagala@gmail.com

19. हरि ओम सोंढ़ी, नई दिल्ली

20. खड़क सिंह मेहरा, नैनीताल

21. विराग आर.धूलिया, बंगलौर

22. सुश्री कुमकुम विकास सिरपुरकर, नई दिल्ली

23. गौरव बंडी, इन्दौर

24. गौरव सहरावत, gauravsehravat@gmail.com

25. आशीष मिश्रा, लखनऊ

26. उमंग गुप्ता, रामपुर, बलिया

27. अवधेश कुमार यादव,ञ नागपुर

28. टी. आर. पदमाजा, सिकन्दराबाद

29. टी. सी. राघवन, सिकन्दराबाद

30. सी. श्याम सुन्दर, हैदराबाद

31. सुश्री शोभा देवी, आर. आर. डी.टी., हैदराबाद

32. ए. नागेश्वर राव, हैदराबाद

33. प्रवीन चन्द, हैदराबाद

34. आर. बी. टिम्मा रेड्डी, हैदराबाद

35. ए. वेनु गोपाल कडापा, हैदराबाद

36. सुश्री अदित्या, हैदराबाद

37. बी. युदेस्तल लाल, हैदराबाद

38. सुब्रामण्यम कात्री, हैदराबाद

39. ए. साई किरन, हैदराबाद

40. एस. जगननाथ, बंगलौर

41. प्रसाद चुईलाल, पूना

42. बिस्वादीप पाल, पूना

43. अविनाश डी. गुणे, पूना

44. दामोदर वर्दे, इन्दौर

45. केदार अम्बेदकर, पूना

46. संदेश वी. चोपदेकर, पूना

47. देवकांत वर्दे, पूना

48. संजीत गुप्ता, पूना

49. सैड्रिक डिसूजा, पूना

50. अमनदीप भाटिया, पूना

51. अर्जुन सिंह रावत, पूना

52. एन. के. जैन, उज्जैन

53. राज कुमार जैन, उज्जैन

54. शशीधर राव, हैदराबाद

55. मोहम्मद हिदायतुल्ला, हैदराबाद

56. चन्द्र शेखर, हैदराबाद

57. पी. सुगनावती, हैदराबाद

58. वी. डेविड, हैदराबाद

59. रेड्डी विद्याधर, आर. आर. जिला, हैदराबाद

60. ईश्वर लाल, आर. आर. जिला, हैदराबाद

61. ए. सत्यानारायण, हैदराबाद

62. एम. वी. रामा मोहन, हैदराबाद

63. के. वी. इन्दिरा, केरल

64. पी.राजू, बंगलौर

65. जी.आर. रेड्डी,हैदराबाद

66. डी. एस. नाथनील, हैदराबाद

67. के.श्रीराम,हैदराबाद

68. रजनीश के. वी., हैदराबाद

69. एम. वी. अदित्या, हैदराबाद

70. पी. रंगा राव, हैदराबाद

71. टी. वी. एस. राम रेड्डी, आर. आर. जिला, हैदराबाद

72. आर. राहुल, निज़ामाबाद

73. जे. पी. साहू, दमोह

74. बी. विनोद कुमार, निज़ामाबाद

75. पोनवैया कात्री, हैदराबाद

76. पी. के. आचार्य, हैदराबाद

77. बी.यमुना,चेन्नई

78. जे. शरत चन्द्र,

79. पी. एन. राव, अमालपुरम

80. के. नरसैय्या, हैदराबाद

81. के. रामकृष्ण राव, राजमुन्द्री

82. डी. एन. सैमुअल राज, हैदराबाद

83. डी. एन. लवानी, हैदराबाद

84. वी. मधानी, सिकन्दराबाद

85. आर.राजशेखर रेड्डी, हैदराबाद

86. पी. श्रीराम मूर्ति, हैदराबाद

87. के. एल. स्वपना, राजमुंद्री

88. गौरी शंकर, हैदराबाद

89. एल. नरसिंहा राव, हैदराबाद

90. सुशील कुमार आचाय्र, हैदराबाद

91. डी. एन. केरुपवाश्याम, हैदराबाद

92. टी. रमेश, हैदराबाद

93. पी. सतीश कुमार, हैदराबाद

94. टी. श्रीनिवास, नालगोंडा

95. एम. सतीश किरण्, आर. आर. जिला, हैदराबाद

96. पार्थसारथी, सिकन्दराबाद

97. सरस्वती देवी, हैदराबाद

98. ए. रंगबैय्या, हैदराबाद

99. टी. अन्नपूर्णा, आर. आर. जिला, हैदराबाद

100. शाह अली अहमद, सिकन्दराबाद

101. ए. साईं नाथ, हैदराबाद

102. एस. मनसा, हैदराबाद

103. समीर बख्शी, खड़गपुर, पश्चिम बंगाल

104. रूमी डे, खड़गपुर, पश्चिम बंगाल

105. भानपु डे, खड़गपुर, पश्चिम बंगाल

106. सुमन कुमार डे, खड़गपुर, पश्चिम बंगाल

107. टिन्नी गौड़, जबलपुर

108. अरुण यादव, जबलपुर

109. टी. सालगु, उज्जैन

110. आशीष गुप्ता, उज्जैन

111. टी. एम. कमरान, पूना

112. पुशपाल स्वर्णकर, दुर्ग

113. कर्नल एच. शर्मा, नोएडा

114. राण मुखर्जी, अधिवक्ता, अवैतनिक सचिव, बार एसोसिएशन, उच्च न्यायालय, कलकत्ता

115. नागरत्ना ए., सहायक प्रोफैसर लॉ, एन. एल. एस. आई. यू., नागरभावी, बंगलौर

116. राज घोसल, थाने (पश्चिम), महाराष्ट्र

117. पंकज आर. सोंतके, कंडीवाली (पूर्वी), महाराष्ट्र

118. आशीश अग्रवाल, विखरोली (पश्चिम), महाराष्ट्र

119. सेवियो फर्नांडीज़, थाने (पश्चिम), महाराष्ट्र

120. आनन्द एम. झा, कल्याण (पश्चिम), महाराष्ट्र

121. सच्चिदानन्द सिंह पटेल, नवी मुम्बई, महाराष्ट्र

122. आरोग्य दत्ता, नेरुल, महाराष्ट्र

123. देवव्रत भाद्रा, जमशेदपुर, झारखंड

124. विकास झुनझुनवाला, वोर्ली, महाराष्ट्र

125. मुकन्द झाला, सिंह दरवाज़ा, बर्दवान, पश्चिम बंगाल

126. संदीप डे, डोम्बीवाली (पूर्वी), महाराष्ट्र

127. अनुराग जोशी, थाने (पश्चिमी), महाराष्ट्र

128. गायत्री देवी, सागर रोड, हैदराबाद

129. रमेश लाल, शालीमार बाग, दिल्ली

130. प्रियंक परख, मानचेस्टर, यू. एस. ए.

131. कत्री राम वेंकटेश, रंगा रेड्डी, जिला आंध्र प्रदेश

132. शरत चन्द्र पी., पंजागुट्टा, हैदराबाद

133. सुब्बा राव पी., पंजागुट्टा, हैदराबाद

134. वी. कमलम्मा, चांदनगर, हैदराबाद

135. डा. पी. सुधीर, काकीनाडा, आंध्र प्रदेश

136. एस. एन. कुमार, हैदराबाद

137. के. वी. एन. एस., लक्ष्मी, राजमुंद्री

138. मनोज कुमार साहू, कंचनबाग, हैदराबाद

139. के. एस. राम, विजयनगर कालोनी, हैदराबाद

140. एम. राम बाबू, जनप्रिय नगर कालोनी, रंगा रेड्डी जिला

141. राम प्रकाश शर्मा, रोहिणी, नई दिल्ली

142. मंजू यादव, जबलपुर

143. तीजा यादव, अधरताल, जबलपुर

144. चंद्र यादव, अधरताल, जबलपुर

145. संतोष विश्वकर्मा, अधरताल, जबलपुर

146. आशुतोष यादव, अधरताल, जबलपुर

147. अमिताभ भट्टाचार्य, वर्धा रोड, नागपुर

148. कृष्णा आर. के. वी., aamele.law@gmail.com

149. मिलाप चोरारिया, रोहिणी, नई दिल्ली

150. आनन्द वल्लभ लोहानी, हल्दवानी, उत्तराखंड

151. पार्थ साधुखान, हैदराबाद

152. रमेश कुमार जैन, sirfiraa@gmail.com

153. नामदेवन एन., nama49@yahoo.com

154. प्रोनी घोष, काचर, आसाम

155. सिबी थामस, भड़ौच, गुजरात

156. आर. एस. शर्मा, अमिटी विश्वविद्यालय, उत्तर प्रदेश

157. टी. गोपाल कृष्ण, चिचमगुलर

158. एन. एस. महेश, बंगलौर, कर्नाटक

159. शैलजा जी. हरिनाथ, बंगलौर

160. वी. वी. लक्ष्मणन, अम्बातुर, चेन्नई

161. जावेश एम. पोरिया

162. पी. रुकमाचारी, बंगलौर

163. दीपक केसरी, बंगलौर

164. राजशेखर सी.आर., बंगलौर

165. एन. एच. शिग्गन, विगनान नगर, बंगलौर

166. अजय एम. यू. इलैक्ट्रानिक सिटी, बंगलौर

167. वधर्मान नायर, बंगलौर

168. कृष्णा मूर्ति, बंगलौर

169. शशीधर सी.एम., विनायक एक्सटैंशन, बंगलौर

170. नारयण् कुमार, बंगलौर

171. अमजद एफ. जमादार, बेलगाम, कर्नाटक

172. मोहम्मद अरशाद, रंगनाथ कालोनी, बंगलौर

173. बी. ए. पठान, हुबली, कर्नाटक

174. परोनी कुमार घोषै, कचार, आसाम

175. एन. एन. सुजौन, विज्ञनान नगर, बंगलौर

176. राधिकानाथ मलिक, कोलकाता, पश्चिम बंगाल

177. मकसूद मुजावर,maqsud_max@rediffmail.com

178. सरोज बाला धवन, डी. एल. एफ. गुड़गांव,हरियाणा

179. विराग आर. धूलिया, सी. सी. रमन नगर, बंगलौर

180. रहमतुल्ला शरीफ, गंगा नगर, बंगलौर

181. अविनाश् कुमार, मेन एच. एस. आर. लेआउट, बंगलौर

182. रामकृष्ण, ramkrishna.manpuri@gmail.com

183. राजकुमार, रोहतक

184. रीतेश दहिया, riteshndehhia@gmail.com

185. वीरेश वर्मा, vermaviresh@gmail.com

186. सुधा चौरंग चक्रवर्ती, हुगली, पश्चिम बंगाल

अधिकारी/न्यायिक अधिकारी

सर्वश्री

1. रेनचामो पी. किकन, आई. पी. एस., उप पुलिस महानिरीक्षक, कोहिमा

2. मृणालिनी श्रीवास्तव, पुलिस अधीक्षक, सी. आई. डी., गंगटोक, सिक्किम ।

3. एम.एम. बनर्जी, जिला न्यायाधीश, बीरभूम, सूरी ।

4. अभय कुमार, रजिस्ट्रार, मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर (न्यायिक अधिकारियों की ओर से, प्रशिक्षण संस्था) ।

5. नुंगशितोम्बी अथोकपम, उप विधि परामर्शी, मणिपुर सरकार ।

6. बिमल एन. पटेल, निदेशक, जी. एल. एन. यू., गांधीनगर, गुजरात ।

7. विजय कुमार सिंह, जिला और सेशन न्यायाधीश, जम्मू ।

8. श्रीकांत डी. बबलाडी, जिला न्यायाधीश सदस्य, कर्नाटक अपीली अधिकरण, बंगलौर ।

9. बिजेन्द्र कुमार सिंह, जिला और सेशन न्यायाधीश, गोपालगंज, बिहार ।

10. पी.एम.एस. नारायणन, राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग, खान मार्केट, नई दिल्ली ।

11. आर.के. वटेल, जिला और सेशन न्यायाधीश, रेइसी (जम्मू-कश्मीर)

12. *उप पुलिस अधीक्षक (मुख्यालय), कार्यालय पुलिस महानिदेशक, अण्डेमान एवं निकोबार द्वीप समूह, पोर्ट ब्लेयर ।

13. *प्रधान जिला एंव सत्रन्यायाधीश, किश्तवार ।

14. एस. एन. केंपागौडर, जिला न्यायाधीश, सदस्य, कर्नाटक अपीली अधिकरण, बंगलौर ।

15. दीपक पुरोहित, पुलिस अधीक्षक, डी. एण्ड एन. एच, सिलवासा ।

16. उद्दयन मुखोपध्याय, जिला और सेशन न्यायाधीश, पूर्वी मेदनापुर ।

17. *जिला एवं सत्र न्यायाधीश, वैशाली, हाजीपुर ।

18. एस. ए. मित्तलकोड, जिला और सेशन न्यायाधीश, ए. आई. जी.-1, मिज़ोरम सरकार ।

19. पी. सी. लालछुअनवामा,ए. आई.जी-1 (पुलिस महोनिदेशक के लिए) मिज़ोरम,आइज़वल)

20. प्रभात कुमार अधिकारी, सचिव(विधि) ए. एण्ड एन प्रशासन, पोर्ट ब्लेयर ।

21. *प्रधान सचिव (विधि-विधायन), हिमाचल प्रदेश सरकार ।

22. एल. एम. संगमा, सचिव, मेघालय सरकार, विधि विभाग ।

23. एस. आर. दास, सहायक पुलिस महानिरीक्षक(कार्मिक), त्रिपुरा

सरकार, अगरतला ।

24. बी. के. श्रीवास्तव, प्रभारी सचिव, विधि विभाग, पश्चिम बंगाल सरकार ।

25. रणजीत कुमार बेग, जिला न्यायाधीश, मालडा, पश्चिम बंगाल ।

26. संजीत मुज़मदार, अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, मालडा, पश्चिम बंगाल ।

27. अनन्त कुमार कापरी, अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, मालदा, पश्चिम बंगाल ।

28. कौशिक भट्टाचार्य, अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, मालदा, पश्चिम बंगाल ।

29. सुबोध कुमार बटबायल, अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, मालदा, पश्चिम बंगाल ।

30. संजीव मुखोपध्याय, अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, मालदा, पश्चिम बंगाल ।

31. सिबाशीष सरकार, अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, मालदा, पश्चिम बंगाल ।

32. सब्यसाही चट्टोराज, सिविल न्यायाधीश (ज्येष्ठ खण्ड), मालदा ।

33. थेजेगु-यू-किरे, उप विधि परामर्शी, नागालैंड सरकार,कोहिमा ।

34. ईशान चन्द्र दास, जिला न्यायाधीश, बर्दवान ।

35. *पुलिस महानिरीक्षक (मुख्यालय), बिहार, पटना ।

36. अरिंधम पाल, डी. एल. आर. एवं उप सचिव, विधि, त्रिपुरा ।

37. गृह सचिव, चंडीगढ़ प्रशसन ।

38. *पुलिस अधीक्षक, पणजी, गोवा ।

39. न्यायमूर्ति अमरबीर सिंह गिल, अध्यक्ष, पंजाब राज्य विधि आयोग, चंडीगढ़ ।

40. *अपर पुलिस महानिदेशक (अपराध), पंजाब, चंडीगढ़ ।

41. एल. के. गौड़,विशेष न्यायाधीश, सी. बी. आई.-9, तीस हज़ारी न्यायालय, दिल्ली ।

42. एम. के. नागपाल, ए.एस.जे./विशेष न्यायाधीश, एन. डी. ओ. एस., दक्षिण एवं दक्षिण पूर्व जिला, साकेत न्यायालय, नई दिल्ली ।

43. डा. नीरा भरिहोक, ए.डी.जे.- V, दक्षिण साकेत न्यायालय, नई दिल्ली ।

44. संजीव कुमार, मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट, दक्षिण-साकेत न्यायालय, नई दिल्ली ।

45. चेतना सिंह, मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट, दक्षिण-साकेत न्यायालय, नई दिल्ली ।

46. संदीप गर्ग, मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट, दक्षिण-साकेत न्यायालय, नई दिल्ली ।

47. अनु अग्रवाल, सिविल न्यायाधीश, दक्षिण-साकेत न्यायालय, नई दिल्ली ।

48. *जिला एवं सत्रन्यायाधीश, अम्बाला ।

49. एस. एस. लाम्बा, जिला और सेशन न्यायाधीश, रोहतक ।

50. *जिला और सेशन न्यायाधीश, फतेहबाद ।

51. *जिला और सेशन न्यायाधीश, रिवाड़ी ।

52. आर. एस. विर्क, जिला और सेशन न्यायाधीश, गुड़गांव ।

53. के. सी. शर्मा, जिला और सेशन न्यायाधीश, पानीपत ।

54. *जिला और सेशन न्यायाधीश, कैथल ।

55. *जिला और सेशन न्यायाधीश, जींद ।

56. दीपक अग्रवाल, जिला और सेशन न्यायाधीश, जींद ।

57. डी. एन. भारद्वाज, जिला और सेशन न्यायाधीश, जींद ।

58. डा. चंद्र दास, न्यायिक मजिस्ट्रेट, जींद ।

59. प्रवीन कुमार, अपर सिविल न्यायाधीश (ज्येष्ठ खण्ड-सह- उप-खण्ड न्यायिक मजिस्ट्रेट), सफीदों ।

60. कुमुद गंगवानी, उप खण्ड न्यायिक मजिस्ट्रेट, नरवाना ।

61. गुरविन्दर सिंह गिल, जिला और सेशन न्यायाधीश, फतेहगढ़ साहिब ।

62. राज राहुल गर्ग, जिला और सेशन न्यायाधीश, करनाल ।

63. *जिला और सेशन न्यायाधीश, भिवानी ।

64. नरेन्द्र कुमार, जिला न्यायाधीश (कुटुम्ब न्यायालय), भिवानी ।

65. राजेन्द्र गोयल, अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, भिवानी ।

66. राजेश कुमार भनखड़, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, भिवानी ।

67. तरुण सिंगल, मुख्य न्यायाधीश(कनिष्ठ खण्ड), भिवानी ।

68. नरेन्द्र सिंह, मुख्य मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, भिवानी ।

69. रजनी यादव, अपर सिविल न्यायाधीश (ज्येष्ठ खण्ड)-सह-उप-खण्ड न्यायिक मजिस्ट्रेट, लोहारू ।

70. बलवन्त सिंह, सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ खण्ड)-सह-उप- खण्ड न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, भिवानी ।

71. नरेन्द्र शर्मा, उप-खण्ड न्यायिक मजिस्ट्रेट, चरखी दादरी ।

72. ए. एस. नायर, सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ खण्ड), चरखी दादरी ।

73. प्रवेश सिंगला, सिविल न्यायाधीश, चरखी दादरी ।

74. कुलदीप जैन, अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, सोनीपत।

75. संजीव कुमार, अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, सोनीपत ।

76. गुलाब सिंह, अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, सोनीपत ।

77. विवेक भारती, अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, सोनीपत ।

78. रितु गर्ग, अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, सोनीपत ।

79. लाल चंद, सिविल न्यायाधीश (ज्येष्ठ खण्ड)-सह- ए.सी.जे.एम., सोनीपत ।

80. मधुलिका, सी. जे. (जे.डी.)-सह-जे.एम.आई.सी., सोनीपत।

81. रंजना अग्रवाल, अपर सिविल न्यायाधीश(ज्येष्ठ खंड), सोनीपत ।

82. राजेश कुमार यादव, सी. जे. (एस.डी.)-सह-जे.एम.आई.सी., सोनीपत ।

83. हरीश गुप्ता, अपर सिविल न्यायाधीश (ज्येष्ठ खण्ड), गनौर ।

84. के. पी. सिंह, अपर सिविल न्यायाधीश (ज्येष्ठ खण्ड), गोहाना ।

85. संजीव जिन्दल, अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, नारनौल ।

86. रजनीश बंसल, अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, नारनौल ।

87. सुधीर जीवन, अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, फास्ट ट्रेक न्यायालय, नारनौल ।

88. प्रवीन गुप्ता, अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, नारनौल ।

89. चन्द्र हास, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, नारनौल ।

90. *जिला और सेशन न्यायाधीश, गुरदासपुर ।

91. चंडीगढ़ न्यायिक एकेडमी, डा. वीरेन्द्र अग्रवाल, निदेशक (एकेडमिक्स), चंडीगढ़ ।

92. राजेश कुमार यादव, अपर जिला ओर सेशन न्यायाधीश, सी.जे.(जे.डी.)-सह-जे.एम.आई.सी., सोनीपत ।

93. *जिला और सेशन न्यायाधीश, चंडीगढ़ ।

94. *जिला और सेशन न्यायाधीश, सिरसा ।

95. *जिला और सेशन न्यायाधीश, झज्जर ।

96. *जिला और सेशन न्यायाधीश,श् फरीदाबाद ।

97. *जिला और सेशन न्यायाधीश, जगाधरी स्थित, यमुना नगर ।

98. *जिला और सेशन न्यायाधीश, पंचकुला ।

99. *जिला और सेशन न्यायाधीश, पेहवा ।

100. राजेन्द्र पाल सिंह, अपर सिविल न्यायाधीश (ज्येष्ठ खण्ड), पेहवा ।

101. गुरचरण सिंह शरण, जिला और सेशन न्यायाधीश्, शहीद भगत सिंह नगर ।

102. *जिला और सेशन न्यायाधीश, रूपनगर ।

103. इन्द्रजीत सिंह, जिला और सेशन न्यायाधीश, जालन्धर ।

104. *जिला और सेशन न्यायाधीश, फिरोज़पुर ।

105. *जिला और सेशन न्यायाधीश, कपूरथला ।

106. *जिला और सेशन न्यायाधीश, मनसा ।

107. अमित कुमार गर्ग, न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी, कुरुक्षेत्र 108.

*जिला और सेशन न्यायाधीश, कुरूक्षेत्र ।

109. मनीश बतरा, अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, कुरूक्षेत्र।

110. हरलीन शर्मा, सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ खण्ड), कुरूक्षेत्र।

111. संजीव कुमार, अपरा जिला और सेशन न्यायाधीश, कुरूक्षेत्र।

112. संजीव आर्य, न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी, कुरूक्षेत्र।

113. अरिण कुमार सिंघल, अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, कुरूक्षेत्र ।

114. जगजीत सिंह, सिविल न्यायाधीश (ज्येष्ठ खण्ड), कुरूक्षेत्र।

115. अमरेन्द्र शर्मा, सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ खण्ड), कुरूक्षेत्र।

116. राज गुप्ता, सिविल न्यायिक न्यायाधीश, कुरूक्षेत्र ।

117. अनुदीप कौर भाटी, न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी, कुरूक्षेत्र ।

118. अक्षदीप महाजन, न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी, महेन्द्रगढ़।

119. नरेन्द्र पाल, न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी, नारनौल ।

120. *जिला और सेशन न्यायाधीश, हिसार ।

121. *जिला और सेशन न्यायाधीश, अमृतसर ।

122. *जिला और सेशन न्यायाधीश, पटियाला ।

123. *जिला और सेशन न्यायाधीश, होशियारपुर ।

124. *जिला और सेशन न्यायाधीश, लुधियाना ।

125. *जिला और सेशन न्यायाधीश, भटिंडा ।

126. *जिला और सेशन न्यायाधीश, श्री मुक्तसर साहिब ।

127. *जिला और सेशन न्यायाधीश, श्री मुक्तसर साहिब ।

128. श्री हरि एस. डी. शिरोडकर, अवर सचिव, विधि विभाग, गोवा सरकार ।

129. श्री एस. जी. मराठे, संयुक्त सचिव त्रविधि), गोवा सरकार।

130. श्री प्रमोद कुमारख्, विधि सचिव, गोवा सरकार ।

131. श्री मंगेश कश्यप, पुलिस उपायुक्त(मुख्यालय), कार्यालय पुलिस आयुक्त, दिल्ली ।

132. श्री डी. वी. के. राव, अवर सचिव, महिला और बाल विकास मंत्रालय ।

133. श्री टी. पचुआयु, पुलिस महानिरीक्षक(प्रशासन), पुलिस विभाग, मणिपुर सरकार ।

134. श्री एस. सिवैया नायडु, महारजिस्ट्रार,आंध्र प्रदेश सरकार ।

135. श्री जी. राइम, उप सचिव (गृह), गृह और अन्तरराज्य सीमा कार्य, अरुणाचल प्रदेश सरकार, इटानगर ।

संस्थाएं :

1. सेव इंडिया हार्मनी, (श्री बी. के. अग्रवाल, सभापति), विशाखापट्नम ।

2. एस.आई.एफ.एफ.एम.डब्ल्यू.बी., (श्री एस. भट्टाचार्जी), कोलकाता ।

3. विजिलेंट वूमैन मंच, (सचिव, सुश्री सुमन जैन), दिल्ली।

4. नेशनल फैमिली हार्मनी सोसायटी, सभापति (श्री पी. सुरेश), कर्नाटक और 41 अन्य ।

5. मदर्स एण्ड सिस्टर्स इनीशिएटिव – एम. ए. एस. आई, (श्रीमती शालिनी शर्मा) महा सचिव ।

6. भारत बचाओ संगठन, (श्री विनीत रूईया), सभापति, कोलकाता ।

7. प्रिटो पुरुष परिषद्, एन. जी. ओ., कोलकाता ।

8. इंसाफ, नई दिल्ली ।

9. ऑल इंडिया फोरगोटन वूमैंस एसोसिएशन, हैदराबाद ।

10. मैम्बर्स ऑफ मिलियन वूमैन अरेस्टिड कंपेन(आर्गे.), फरीदाबाद, हरियाणा ।

11. के. एफ. डब्ल्यू. एल., सचिव, (सुश्री अनीता महाधिवक्ता), केरल उच्च न्यायालय बिल्डिंग, कोचि ।

12. लायर्स कलैक्टिव, (सुश्री इंदिरा जयसिंग), जंगपुरा एक्सटेंशन, नई दिल्ली ।

13. रक्षक फाउंडेशन, श्री सचिन बंसल, यू. एस. ए.

14. ए. डब्ल्यू. ए. जी.इला पाठक, अहमदाबाद ।

15. ए. आई. डी. डब्ल्यू. ए. (सुश्री कीर्ति सिंह), लीगल कंवीनर, एडवोकेट, दिल्ली ।

16. पी. एल. डी. (पाटनर्स फार ला इन डिवलपमैंट), सुश्री मधु मेहरा, भूतपूर्व निदेशक, नई दिल्ली ।

17. भारत विकास परिषद् (श्री राज पाल सिंगला, सभपति), चंडीगढ़, पंजाब ।

उपाबंध – 2

भारत का विधि आयोग

भारतीय दंड संहिता की धारा 498-क से संबंधित

परामर्शपत्र-सह-प्रश्नावली

1. विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त अभ्यावेदनों और उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों द्वारा व्यक्त मताभिव्यक्तियों को ध्यान में रखते हुए, भारत सरकार के गृह मंत्रालय ने भारत के विधि आयोग से इस पर विचार करने का अनुरोध किया कि क्या विशेषकर अति-विवक्षा के रूप में भारतीय दंड संहिता की धारा 498-क के अभिकथित दुरुपयोग को नियंत्रित करने के लिए उक्त उपबंध में कोई संशोधन करना या अन्य उपाय करना आवश्यक है ।

2. वर्ष 1983 में धारा 498क विवाहित स्त्री को पति या उसके नातेदारों द्वारा क्रूरता से संरक्षित करने के लिए शामिल की गई थी । तीन वर्ष तक का दंड और जुर्माना विहित किया गया है । "क्रूरता" पद को व्यापक अर्थ में परिभाषित किया गया है जिससे कि स्त्री के शरीर या स्वास्थ्य को शारीरिक या मानसिक अपहानि पहुंचाने और किसी संपत्ति या मूल्यवान संपत्ति की विधिविरुद्ध मांग को पूरा करने के लिए उसे या उसके नातेदारों को प्रपीड़ित करने की दृष्टि से तंग करने के कार्य में लगे होने को शामिल किया जा सके । दहेज के लिए तंग करना धारा के बाद वाले भाग की परिधि के भीतर आता है । स्त्री को आत्महत्या करने के लिए स्थिति पैदा करना भी "क्रूरता" का एक तत्व है । धारा 498-क के अधीन

अपराध संज्ञेय, अशमनीय और अजामनतीय है ।

3. प्रीति गुप्ता बनाम झारखंड राज्य वाले हाल ही के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि विधान मंडल द्वारा उपबंध पर गंभीर रूप से पुनर्विचार करने की अपेक्षा है । "यह आम जानकारी का विषय है कि अधिकांश परिवादों में घटनाओं का उल्लेख बढ़ा-चढ़ाकर किया जाता है । बहुत अधिकांश मामलों में अति-विवक्षा की प्रवृत्ति भी प्रतिबिम्बित होती है ।" न्यायालय ने पति और उसके सभी नजदीकी नातेदारों को फंसाने की आम प्रवृत्ति पर ध्यान दिया । सुशील कुमार शर्मा बनाम भारत संघ (2005) वाले पूर्व मामले में भी उच्चतम न्यायालय ने शोक प्रकट किया कि कई दृष्टांतों में, धारा 498क के अधीन व्यक्तिगत दुश्मनी निकालने के लिए दूरस्थ हेतुक से परिवाद फाइल किए जा रहे हैं । यह मत व्यक्त किया गया कि "विधान मंडल के लिए ऐसा रास्ता निकालना आवश्यक हो गया है कि निरर्थक परिवाद या अभिकथन करने वालों से समुचित रूप से कैसे निपटा जाए ।" यह भी मत व्यक्त किया गया कि "उपबंध के दुरुपयोग द्वारा एक नया विधिक आतंकवाद प्रवर्तित हो सकता है ।"

4. धारा 498क के अधीन मामलों के सांख्यिकीय आंकड़े से अति-विवक्षा की सच्चाई का पता चलता है । पति के नातेदारों की ऐसी विवक्षा को अधिकांश विनिश्चित मामलों में अन्यायोचित पाया गया । इसके साथ-साथ यह प्रतीत होता है कि विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों मे रहने वाली समाज के गरीब दर्जे की महिलाएं बिरले ही इस उपबंध का अवलंब लेती हैं ।

5. धारा 498-क के अधीन मामलों की बाबत दोषसिद्धि की दर

बिल्कुल कम है । यह पता चला है कि सौहार्दपूर्ण समाधान जैसी पश्चातवर्ती घटनाओं के कारण परिवादी स्त्रियां अभियोजन को उसके तार्किक निष्कर्ष तक पहुंचाने की रुचि नहीं रखती ।

6. उपयुक्त संशोधनों द्वारा धारा 498क की कठिनाई दूर करने के तर्क (जिसका समर्थन न्यायालय के निर्णयों में व्यक्त मताभिव्यक्तियों और आपराधिक न्याय प्रणाली के सुधार पर न्यायमूर्ति मलिमथ कमेटी रिपोर्ट से मिलता है) इस प्रकार हैं : जब एक बार भा. दं. स. की धारा 498क/406 के अधीन पुलिस के पास परिवाद (प्रथम इत्तिला रिपोर्ट) दर्ज हो जाता है तो अभिकथनों के अंतर्भूत तत्वों पर विचार और प्रारंभिक अन्वेषण किए बिना प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में नामित पति और अन्य नातेदारों को गिरफ्तार करने या गिरफ्तार करने की धमकी देने का एक आसान हथियार पुलिस के हाथों लग जाता है । जब कुटुम्ब के किसी सदस्य को गिरफ्तार किया जाता है और जमानत की तत्काल पूर्वापेक्षा के बिना कारागार भेजा जाता है तो सौहार्दपूर्ण सुलह और विवाह को बचाने का अवसर हमेशा-हमेशा के लिए समाप्त हो जाता है । यह इंगित किया गया है कि सुलह की संभाव्यता से इनकार नही किया जा सकता और पूरी तरह से इसका पता लगाया जाना चाहिए । इस प्रकार पुलिस द्वारा तत्काल गिरफ्तारी प्रतिकूल प्रभाव डालेगी । दीर्घकारी और लम्बे समय तक चलने वाले आपराधिक विचारण कुटुम्ब के संबंधियों के बीच संबंधों में दुश्मनी और कटुता पैदा करते हैं । इस तथ्य को ध्यान मे रखते हुए वैवाहिक मामलों पर विचार करते समय व्यावहारिक वास्तविकताओं को ध्यान में रखना चाहिए कि यह एक संवेदनशील पारिवारिक समस्या है जिसकी पुलिस की ओर से दंड प्रक्रिया संहिता के संबद्ध उपबंधों के साथ-साथ भा. दं. सं. की धारा 498क

के कठोर उपबंधों का फायदा उठाकर अति-उत्साही/बेदर्द कार्रवाईयों द्वारा बिगाड़ने की अनुज्ञा नही दी जाएगी । यह इंगित किया गया है कि दंशन स्वयमेव धारा 498क में नहीं बल्कि दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों में इसे अशमनीय और गैर जमानतीय बनाने से है ।

7. दूसरी ओर, यथापूर्व स्थिति बनाए रखने के समर्थन में तर्क संक्षेप में इस प्रकार हैं :–

धारा 498क और घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम जैसे अन्य विधान का अधिनियमन विशेष रूप से समाज के ऐसे संवेदनशील वर्ग का संरक्षण प्रदान करने के लिए किया गया है जो क्रूरता और तंग किए जाने के शिकार हैं । इसका सामाजिक प्रयोजन समाप्त हो जाएगा यदि उपबंध की कठोरता को कम किया जाता है । विधि का उपयोग या दुरुपयोग इस उपबंध के लिए विशिष्ट नहीं है । तथापि, विधि की विद्यमान अवसंरचना के भीतर दुरुपयोग कम किया जा सकता है । उदाहरणार्थ, गृह मंत्रालय राज्य सरकारों को अनावश्यक गिरफ्तारियों से बचने और गिरफ्तारी को लागू होने वाली विधि में अधिकथित प्रक्रियाओं का कड़ाई से पालन करने के लिए "सलाहकारी निर्देश" जारी कर सकता है । परिवाद की सदाशयता और उन लोगों की दोषिता, जिनके विरुद्ध अभियोग लगाए गए हैं, के संबंध में युक्तियुक्त समाधान पर पहुंचने के पश्चात् ही गिरफ्तारी की शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए । इसके अतिरिक्त, पहला अनुक्रम लड़ने वाले पति-पत्नी के बीच प्रभावी मेल-मिलाप और मध्यस्थता होना चाहिए और धारा 498क के अधीन आरोप पत्र फाइल करने का अनुक्रम उन्हीं मामलों में अपनाया जाना चाहिए जहां ऐसे प्रयास असफल हो गए हों

और प्रथमदृष्टया मामला बनता हो । वृत्तिक रूप से अर्ह सलाहकारों द्वारा ही पक्षकारों को सलाह दी जानी चाहिए न कि पुलिस द्वारा ।

7.1 ऐसे ही विचार अन्य लोगों के साथ-साथ महिला और बाल विकास मंत्रालय द्वारा दोहराए गए हैं ।

7.2 इसके अतिरिक्त, यह इंगित किया गया है कि कोई विवाहित महिला निराशा और क्रूरता तथा तंग किए जाने के विरुद्ध कोई अन्य उपचार शेष न रहने के कारण ही अपने पति और अन्य सगे नातेदारों के विरुद्ध परिवाद करने के लिए पुलिस थाने में जाने का जोखिम उठाती है । ऐसी स्थिति में, कुछ मामलों में दुरुपयोग की अति प्रतिक्रिया के बजाय विद्यमान विधि को अपना निजी अनुक्रम अपनाए जाने की अनुज्ञा दी जानी चाहिए ।

7.3 यह भी मत व्यक्त किया गया है कि जब एक बार आघात करने वाले कुटुम्ब के सदस्यों को परिवाद की भनक लग जाती है तो परिवादी को और यातना पहुंचायी जा सकती है तथा उसके जीवन और स्वतंत्रता को खतरा हो सकता है यदि पुलिस शीघ्रता और कड़ाई से कार्य नहीं करती । यह दलील दी गई है कि ससुराल में महिलाओं की अप्राकृतिक मृत्यु के बढ़ते अपराधों के कारण धारा 498-क में कोई ढ़िलाई देने की अपेक्षा नहीं है । दूसरा, मध्यस्थता की दीर्घ प्रक्रिया के दौरान भी, उसे धमकी और यातना मिल सकती है । ऐसी स्थितियों पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है ।

8. न्यायालय की अनुज्ञा से उक्त अपराध को शमनीय बनाने के पक्ष में राय बनाने की संभावना है । कुछ राज्य, उदाहरणार्थ आंध्र प्रदेश ने पहले

ही इसे शमनीय बनाया है । उच्चतम न्यायालय ने राम गोपाल बनाम मध्य प्रदेश राज्य, 2010 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) संख्या 6494 (आदेश तारीख जुलाई 30,2010) वाले हाल ही के मामले में यह मत व्यक्त किया कि इसे शमनीय बनाया जाना चाहिए । तथापि, इस बिन्दु पर विचारों में घोर भिन्नता है क्या इसे जमानतीय अपराध बनाया जाना चाहिए । कुछ लोगों द्वारा यह अभिवचन किया गया है कि धारा 498क के अधीन अपराध को कम से कम पति के नातेदारों के संबंध में जमानतीय बनाया जाना चाहिए ।

8.1 ऐसे लोग जो शमनीयता के प्रतिकूल हैं, की यह दलील है कि विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं पर अनुचित समझौता करने का दबाव डाला जाएगा और इसके अतिरिक्त उपबंध का निवारक प्रभाव समाप्त हो जाएगा ।

9. आयोग का यह मत है कि धारा से सहबद्ध दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंध दमन और प्रति-तंगीकरण के उपकरण के रूप में कार्य नहीं करेंगे और पुलिस की ओर से अविवेकी और मनमानेपन की कार्रवाई के औजार नहीं बनेंगे । इस तथ्य को नहीं भुलाया जा सकता है कि धारा 498क व्यापक समाज के विरुद्ध अन्य अपराधों से भिन्न कुटुम्ब की समस्या और वैवाहिक अनबन की स्थिति के बारे में है । तथापि, इसका यह अभिप्राय नहीं है कि पुलिस को परिवादी महिला की शिकायत को समानुभूति या समझबूझ से नहीं परखना चाहिए या यह कि पुलिस को निष्क्रिय भूमिका निभानी चाहिए ।

10. धारा 498क का उदात्त सामाजिक प्रयोजन है और इसे उस समय

हस्तक्षेप करने के लिए कानूनी पुस्तक में बना रहना चाहिए जब कभी अवसर पैदा हो । इसके उद्देश्य और प्रयोजन के दुरुपयोग या गलत प्रयोग के लिए इसकी प्रभावकारिता पर अति बल देकर निष्प्रभावी नहीं बनाया जा सकता है । स्वयं गलत प्रयोग इसे निरसित करने या इसके संपूर्ण प्रभाव को छीन लेने का आधार नहीं हो सकता है ।

11. जहां आयोग अन्यायोचित और निरर्थक परिवादों को हतोत्साहित करने और अति-विवक्षा के अनिष्ट को दूर करने की आवश्यकता का प्रशंसक है, वहीं वह ऐसा मत व्यक्त करने का इच्छुक नहीं है जो विशेषकर इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि महिलाओं के विरुद्ध अत्याचार बढ़ रहे हैं, इसके प्रयोजन को विफल करने के विस्तार तक धारा 498क के प्रभाव को कम करता हो । गुण और अवगुण का मूल्यांकन करते हुए एक संतुलित और समग्र दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए । इसमें कोई संदेह नहीं है कि गलत प्रयोग स्थितियों पर विचार करने और विधायी या अन्यथा – एक समाधान निकालने की आवश्यकता है ।

12. विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में रह रहे ऐसे गरीब और निरक्षर लोगों को उपबंधों की जानकारी प्रदान करने की भी आवश्यकता है जो प्रायः पियक्कड़ दुर्व्यवहार और महिला समूह से तंग होने की समस्याओं से जूझते हैं । महिलाओं से अधिक, पुरुषों को घरों में उत्पीड़न के विरुद्ध महिलाओं को संरक्षित करने के विधि के दंड देने वाले उपबधों की जानकारी देनी चाहिए । व्यथित महिलाओं की तालुक और जिला स्तर विधिक सेवा प्राधिकरण और/या पेशेवर सलाहकार वाले विश्वसनीय गैर-सरकारी संगठनों तक समुचित उपायों द्वारा आसान पहुंच सुनिश्चित की जानी चाहिए ।

जागरुकता पैदा करने के लिए एक व्यापक और सुनियोजित अभियान चलाया जाना चाहिए । इस समय, इस दिशा में बिल्कुल प्रयास नहीं किया जा रहा है । वर्तमान परिप्रेक्ष्य में एल. एस. ए. के प्रतिनिधियों, विधि छात्रों और सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा एक बार में कुछ गांवों का दौरा किया जाना चाहिए ।

13. चारों ओर यह धारणा है कि ऐसे अधिवक्ता जिसके पास व्यथित महिला या उसके नातेदार पहली नजर में जाते हैं, को उत्तरदायित्वपूर्ण और वस्तुनिष्ठता से कार्य करना चाहिए और निदानित वास्तविक समस्या के अनुकूल उपयुक्त सलाह देनी चाहिए । बढ़ाचढ़ाकर और सिखाए गए बयान तथा पति के नातेदारों के अनावश्यक उलझाव से बचना चाहिए । मामलों से निपटने के लिए विधिक व्यवसायियों की सही सलाह और पुलिस कर्मचारियों की संवेदनशीलता बहुत महत्वपूर्ण है, और यदि ये ठीक है तो निस्संदेह, विधि चक्करदार अनुक्रम नहीं अपनाएगी । दुर्भाग्यवश, यह दृढ़ भावना है कि कुछ अधिवक्ता और पुलिस कार्मिक ऐसी रीति से नैतिक और विधिक रूप से समस्या के प्रति कार्य करने और सोच रखने में असफल रहते हैं जैसी उनसे प्रत्याशा है ।

14. इस प्रकार, उपबंध के क्रियान्वयन के अनुक्रम में ऐसी विविध समस्याएं जो पैदा होती हैं, निम्न हैं : (क) पुलिस सीधे (प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में नामित) पति और उसके कुटुम्ब के अन्य सदस्यों को भी गिरफ्तार करने के लिए दौड़ती है, (ख) थोड़े या किसी औचित्य के बिना उद्वेग और बदला देने की भावना या गलत सलाह के कारण ससुराल और घर के बाहर भी रहने वाले ससुराल वालों और अन्य नातेदारों को फंसाने की

प्रवृत्ति, और (ग) व्यथायुक्त महिला की समस्या के प्रति पुलिस की ओर से व्यावसायिक, संवेदनात्मक और प्रभावयुक्त सोच की कमी ।

15. विचारार्थ मुद्दे के संदर्भ में, घरेलू हिंसा से महिला का संरक्षण अधिनियम, 2005 (संक्षेप में पी डी वी अधिनियम) के उपबंधों का निर्देश करना बिल्कुल प्रासंगिक है जो एक सहबद्ध और पूरक विधि है । उक्त अधिनियम का अधिनियमन ऐसी महिलाओं के अधिकारों के अधिक प्रभावी संरक्षण का उपबंध करने के लिए किया गया जो कुटुम्ब के भीतर होने वाली किसी प्रकार की हिंसा के शिकार हैं । वे अधिकार निश्चित ही दांडिक उपबंधों के मिश्रण के साथ सिविल प्रकृति हैं । अधिनियम की धारा 3 घरेलू हिंसा को बहुत व्यापक शब्दों में परिभाषित करती है । यह धारा 498क के अधीन 'क्रूरता' की परिभाषा में वर्णित स्थितियों को समाविष्ट करती है । अधिनियम ने घरेलू हिंसा से ग्रस्त महिलाओं के हितों के सुरक्षोपाय के लिए व्यापक तंत्र अभिकल्पित किया है । अधिनियम ऐसे संरक्षण अधिकारियों की नियुक्ति का व्यादेश करता है जो प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट के नियंत्र और पर्यवेक्षण के अधीन होंगे । उक्त अधिकारी मजिस्ट्रेट, पुलिस थाना और सेवा प्रदाताओं को घरेलू घटना की रिपोर्ट भेजेगा । संरक्षण अधिकारियो से परिवादी पीड़िता को प्रभावी सहायता प्रदान करने और मार्गदर्शन देने तथा शरण, चिकित्सा सुविधा, विधिक सहायता आदि उपलब्ध करने और अधिनियम के अधीन एक या अधिक अनुतोष के लिए मजिस्ट्रेट के समक्ष उसकी ओर से आवेदन प्रस्तुत करने का कार्य करने की भी अपेक्षा है । मजिस्ट्रेट से आवेदन प्राप्त करने की तारीख से साधारणतया 3 दिनों के भीतर इसकी सुनवाई करने की अपेक्षा है । मजिस्ट्रेट कार्यवाहियों के किसी प्रक्रम पर प्रत्यर्थी और/या

व्यथित व्यक्ति को सेवा प्रदाता से सलाह लेने का निदेश दे सकता है । 'सेवा प्रदाता' ऐसे लोग हैं जो अधिनियम की धारा 10 की अपेक्षाओं के अनुरूप हैं । मजिस्ट्रेट अधिमानतः महिलाओं की सहायता करने के प्रयोजन के लिए कल्याणकारी विशेषज्ञ की सेवाएं भी अर्जित कर सकता है । धारा 18 के अधीन, मजिस्ट्रेट प्रत्यर्थी को सुनवाई का अवसर देने के पश्चात् और प्रथमदृष्टया यह समाधान होने पर कि घरेलू हिंसा हुई है या होने वाली है, प्रत्यर्थी को घरेलू हिंसा का कोई कार्य करने और/या घरेलू हिंसा के सभी कार्यों को सहायता पहुंचाने या दुष्प्रेरित करने से प्रतिषिद्ध करने का संरक्षण आदेश पारित करने के लिए सशक्त है । मजिस्ट्रेट में निवारण आदेश और धनीय अनुतोष मंजूर करने समेत अन्य शक्तियां निहित हैं । धारा 23 इसके अतिरिक्त ऐसे अंतरिम आदेश पारित करने के लिए मजिस्ट्रेट को सशक्त करता है जो वह एकपक्षीय आदेश सहित अन्य आदेश पारित करना ठीक और उचित समझे । प्रत्यर्थी द्वारा संरक्षण आदेश के भंग को एक अपराध माना जाता है जो संज्ञेय और अजमानतीय है और एक वर्ष तक के कारावास से दंडनीय है (धारा 31 द्वारा) । उसी धारा द्वारा, मजिस्ट्रेट भा. दं. स. की धारा 498क और/या दहेज प्रतिषेध अधिनियम के अधीन आरोप विरचित करने के लिए भी सशक्त है । ऐसा संरक्षण अधिकारी जो संरक्षण आदेश के अनुसार अपना कर्तव्य करने में असफल रहता है या उपेक्षा करता है, कारावास से दंडित किए जाने का दायी है (धारा 33 द्वारा) । अधिनियम के उपबंध प्रवृत्त किसी अन्य विधि के उपबंधों के पूरक हैं । धारा 498क के अधीन परिवाद फाइल करने का अधिकार विनिर्दिष्टतः अधिनियम की धारा 5 के अधीन संरक्षित है ।

15.1 इस अधिनियम के उपबंधों और धारा 498क के अधीन कार्यवाहियों

की परस्पर प्रतिक्रिया दो पहलुओं पर कुछ महत्व ग्रहण कर लेता है : (1) ऐसा परिवादी जिसने धारा 498क के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करवाया है, के द्वितीयक उत्पीड़न को रोकने के लए अंतरिम संरक्षण आदेश पारित करवा कर मजिस्ट्रेट के शीघ्र हस्तक्षेप की ईप्सा करना, (2) यथाशीघ्र अवसर पर मजिस्ट्रेट के पर्यवेक्षण के अधीन सलाह लेने की प्रक्रिया के लिए मार्ग तैयार करना ।

16. उपरोक्त विश्लेषण और पूर्वोक्त उपदर्शित दृष्टिकोण की व्यापक रूपरेखा के आधार पर, आयोग अंतिम रिपोर्ट तैयार करने और सरकार को अग्रेषित करने के पूर्व निम्नलिखित बिंदुओं पर सामान्य जनता/गैर-सरकारी संगठनों/संस्थानों/बार एसोसिएशनों आदि के विचार आमंत्रित करता है ।

प्रश्नावली

1. भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध का अभिकथन करते हुए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्राप्त करने पर, आपके अनुसार आदर्शतः पुलिस से क्या प्रत्याशा की जानी चाहिए? उनका दृष्टिकोण और कार्रवाई योजना क्या होनी चाहिए?

2.(क) उच्चतम न्यायालय ने डी. के. बसु (1996) और अन्य मामलों में यह अधिकथित किया है कि वारंट के बिना गिरफ्तारी की शक्ति का अवलंब नैमित्तिक रीति से नहीं लिया जाना चाहिए और यह कि पुलिस अधिकारी का व्यक्ति की दोषिता और गिरफ्तार करने की आवश्यकता के बारे में युक्तियुक्त रूप से समाधान होना चाहिए । क्या आप सहमत हैं कि वैवाहिक मनमुटाव की स्थिति में यह नियम अधिक बल से लागू होता है और गिरफ्तार करने का

कठोर कदम उठाने के पहले पुलिस से अधिक समझबूझ और सतर्कता से कार्य करने की प्रत्याशा की जानी चाहिए?

(ख) अविवेकी और अप्रत्याशित गिरफ्तारी को रोकने के लिए क्या कदम उठाए जाने चाहिए?

3. क्या आप समझते हैं कि अपराध को जमानतीय बनाना समस्या का उचित समाधान है? क्या यह प्रतिकूल प्रभावकारक होगा?

4. न्यायालय के निर्णयों की कतिपय मताभिव्यक्तियों द्वारा समर्थित ऐसा दृष्टिकोण है कि ऐसी प्रकृति के मामलों में गिरफ्तारी करने के पहले, दोनों पक्षों को सलाह देकर मेल-मिलाप की प्रक्रिया का प्रयास करना चाहिए । दूसरे शब्दों में, आरंभ में ही, दंडात्मक उपाय करने से पहले मेल-मिलाप का पता लगाने की संभावना का उपाय किया जाना चाहिए । क्या आप सहमत हैं कि समस्या की प्रकृति और आयाम को ध्यान में रखते हुए मेल-मिलाप पहला कदम होना चाहिए? यदि ऐसा है, तो कितना बेहतर होता कि मेल-मिलाप की प्रक्रिया को अत्यन्त शीघ्रता से किया जाए? क्या ऐसी समय-सीमा होनी चाहिए जिसके पश्चात् पुलिस मेल-मिलाप की प्रक्रिया के निष्कर्ष की प्रतीक्षा किए बिना कार्य करने के लिए स्वतंत्र होगी ?

5. यद्यपि पुलिस आरंभतः समुचित सलाह दे सकती है और मेल-मिलाप प्रक्रिया को सुकर बना सकती है फिर भी मत की यह प्रबलता है कि पुलिस को वास्तविक प्रक्रिया में अंतर्वलित नहीं किया जाना चाहिए और उस प्रक्रम पर उनकी भूमिका प्रेक्षक की

होनी चाहिए? क्या आपका मत इससे भिन्न है?

6.(क) मध्यस्थों के बारे में सहमति के अभाव में, कौन लोग आदर्शतः दोनों पक्षों के जानकार मित्र या अग्रज या व्यावसायिक सलाहकर्त्ता (जो गैर-सरकारी संगठनों के भाग हो सकते है), महिला और पुरुष अधिवक्ता जो ऐसे मामलों में कार्य करने के स्वेच्छया इच्छुक हैं, इलाके के सम्मानित/सेवानिवृत्त व्यक्तियों की समिति या जिले के विधिक सेवा प्राधिकरण मध्यस्थ/सुलहकर्त्ता होंगे?

(ख) कैसे यह सुनिश्चित किया जाएगा कि पुलिस थाने के प्रभारी अधिकारी सहजतः यह पहचान कर सकते हैं और उन लोगों से संपर्क कर सकते हैं जो विशेषकर इस तथ्य को ध्यान मे रखते हुए मेल-मिलाप कराने या मध्यस्थता करने के लिए सर्वाधिक उपयुक्त हैं कि व्यावसायिक या सक्षम सलाहकार सभी स्थानों पर उपलब्ध नहीं हो सकते हैं और प्रक्रिया आरंभ करने में कोई विलंब और जटिलताएं पैदा करेगा?

7.(क) क्या आप सोचते हैं कि धारा 498क के अधीन परिवाद की प्राप्ति पर, पुलिस द्वारा पी. डी. वी. अधिनियम के अधीन न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष आवेदन फाइल किया जाना सुकर बनाने के लिए तत्काल कदम उठाया जाना चाहिए जिससे कि मजिस्ट्रेट अंतरिम संरक्षण प्रदान करने के अलावा सुलह/मेल-मिलाप कराने की प्रक्रिया को गति प्रदान कर सके?

(ख) क्या पुलिस को इस बीच मजिस्ट्रेट की अनुज्ञा के बिना अभियुक्त को गिरफ्तार करने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया जाना चाहिए?

(ग) क्या मजिस्ट्रेट द्वारा आरंभ की गई सुलह प्रक्रिया पूरी होने तक अन्वेषण को आस्थगित कर दिया जाना चाहिए?

8. क्या आप सोचते हैं कि अपराध को न्यायालय की अनुज्ञा से शमनीय बनाया जाना चाहिए? क्या इसे शमनीय न बनाने का कोई विशिष्ट कारण है?

9. क्या आप ज़मानत देने में पति और अन्य अभियुक्तों में अन्तर करना उचित और ठीक समझते हैं?

10(क) क्या आप धारा 498क से संबंधित मामलों के सौहार्दपूर्ण समाधान को सुकर बनाने के संबंध में तालुका और जिला स्तर पर विधिक सेवा प्राधिकरण (एल. एस. ए.) द्वारा निभायी जाने वाली बेहतर और अधिक व्यापक भूमिका की परिकल्पना करते हैं? क्या एल. एस. ए. और पुलिस थाने के बीच बेहतर समन्वय की आवश्यकता है?

(ख) क्या आप सोचते हैं कि व्यथित महिलाएं निचले स्तर पर एल. एस. ए. के पास आसानी से पहुंच जाती हैं और परिवादपूर्व तथा पश्चात्वर्ती प्रक्रमों पर उनसे उचित मार्गदर्शन और सहायता पाती हैं?

(ग) क्या कुछ राज्यों के मध्यस्थता केन्द्र धारा 498क से संबंधित मामलों से निपटने के लिए सुसज्जित और अधिक उपयुक्त हैं?

11. ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं विशेषकर अधिकतम गरीब वर्ग के लोगों को उपलब्ध संरक्षणात्मक दंड उपबंधों और सिविल अधिकारों

की जानकारी फैलाने के लिए आप क्या उपाय सुझाते हैं?

12. क्या आपको ऐसे आश्रय गृहों की संख्या और उनकी दशा के बारे में कोई जानकारी है जिनका गठन ऐसी व्यथित महिलाओं की सहायता करने के लिए पी.डी.वी. अधिनियम के अधीन किया जाना अपेक्षित है जो परिवाद दर्ज कराने के पश्चात् ससुराल में नहीं रहना चाहती या उनकी देखभाल करने वाला कोई नहीं है?

13. आपके अनुसार धारा 498क के अधीन अभियोजनों में कम दोषसिद्धि दर का मुख्य कारण क्या है?

14. (क) क्या अनन्यतः धारा 498क जैसे अपराधों से निपटने के लए प्रत्येक जिले में महिलाओं के विरुद्ध अपराध सेल (सी. डब्लयू. सी.) बनाया जाना वांछनीय है? यदि हां, तो इसकी संरचना और ऐसे सेल में नियोजित महिला पुलिस की क्या अर्हता होनी चाहिए?

(ख) जैसा कि वर्तमान अनुभव से यह दर्शित होता है कि इस बात की संभावना है कि जहां कहीं सी. डब्ल्यू. सी. का गठन किया जाएगा वहां खाली रिक्तियों की संख्या काफी हो सकती है और कार्मिकों को अपेक्षित प्रशिक्षण नहीं मिल सकता है । इस स्थिति में, क्या अधिकारितागत पुलिस थाने को अपवर्जित कर सी. डब्ल्यू. सी. को अन्वेषण आदि का कार्य सौंपा जाना उचित होगा ?

.....